खण्डः 3, अंकः 12 दिसम्बर 2020

संश्लेषण

डी सी आर सी मासिक पत्रिका

कृषक आंदोलन
रणनीति, राजनीति एवं राष्ट्रनीति

डी.सी.आर.सी.
विकासशील राज्य शोध केन्द्र
दिल्ली विश्वविद्यालय

मुख्य संपादक
प्रो. सुनील के चौधरी

संपादक
डा. रमेश भारद्वाज
नागेन्द्र कुमार
शरद कुमार यादव

संपादकीय मंडल
डा. अभिषेक नाथ
कुँवर प्रांजल सिंह
आशीष कुमार शुक्ल

© डीसीआरसी 2020

रूपाकंन एवं संयोजनः राम किशोर

संश्लेषण

कृषक आंदोलनः रणनीति, राजनीति एवं राष्ट्रनीति

अनुक्रमिका

संपादकीय		i-ii
1. कृषक आंदोलनः दशा, दिशा एवं राजनीति	– डॉ. अर्चना सौशिल्या	1–5
2. कृषक आंदोलनः इतिहास और राजनीतिक संबंध	– डॉ. अमित अग्रवाल	6–11
3. लोकतंत्र, विमर्श एवं मतभेदः कृषक आंदोलन के विशेष संदर्भ में	– डा० अभिषेक नाथ	12–14
4. कृषक आंदोलन का क्षेत्रीय स्तरीय विश्लेषणः आधारभूत मांगों का अध्ययन	– शालिनी सिंह	15–20
5. कृषि कानून बनाम केंद्र सरकार और सर्वोच्च न्यायालय	– चित्रा राजौरा	21–26
6. कृषक आंदोलन का डिजिटलीकरणः सड़क से सोशल मीडिया तक	– सुमन साहू	27–32
7. कृषक आंदोलनः आओ बनाए एक बेहतर कल	– सर्वेश कुमार शाह	33–35
8. कृषक आंदोलनः आवश्यकता एवं राजनीतिक अवसरवादिता	– प्रियंका बारगल – हितेन्द्र बारगल	36–41

सम्पादकीय

वर्ष 2018 से हिन्दी प्रकाशन के क्षेत्र में अपनी मासिक पत्रिका, संश्लेषण के 29वें अंक को पाठकों के समक्ष प्रेषित करते हुए हमें एक बार पुनः प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है। अपनी विभिन्न गतिविधियों एवं कार्यों के माध्यम से विकासशील राज्य शोध केंद्र अकादमिक जगत से संबद्ध समस्त शोधार्थियों, शिक्षार्थियों एवं विद्यार्थियों के साथ एक अटूट संबंध बनाए रखने में निरंतर तीन दशकों से कार्यरत रहा है। निरंतरता की इस कडो में संश्लेषण का यह अंक एक बार पुनः शोध के प्रति हमारी निष्ठा, गुणवता एवं प्रतिष्ठा का परिचायक है।

एक द्वितीय महत्वपूर्ण चक्र के रुप में स्थापित भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि स्वतंत्रता उपरांत ही शासन और राजनीति से निरंतर प्रभावित होती रही है। उद्योग की अपेक्षा अर्थव्यवस्था में गौण स्थान प्राप्त करने के पश्चात भी कृषि की भूमिका राष्ट्र विकास में अहम बनी रही। 1950 एवं 1960 के दशकों में क्रमशः भूमि सुधार व हरित क्रांति ने आंशिक रुप में कृषकों को भूमि स्वामित्व देने तथा आत्मनिर्भर राष्ट्र की संकल्पना में कारगर रणनीतियों के रुप में एक सराहनीय योगदान देने का प्रयत्न किया। 1990 में उदारीकरण युग में कृषि को प्रथम राष्ट्रीय नीति के रुप में वैश्विक व्यवस्था से जोडने को भी बल मिला। तत्पश्चात केन्द्र व राज्य सरकारों ने कृषि उत्पादकता को तो प्रधानता दी, किन्तु कृषकों की दशा व दिशा के उत्थान में उदासीनता का ही परिचय दिया।

21वीं शताब्दी में विश्व की प्रतिर्स्पधात्मक बाजार व्यवस्था में भारतीय कृषि एक बार पुनः अपने स्वायत्त स्थान एवं कृषकों के आत्मसम्मान के लिए संघर्षरत होती प्रतीत होने लगी। राजनीतिक दलों एवं चुनावी राजनीति में कृषि के घटते प्रभाव ने कृषकों की स्थिति में कोई सकारात्मक एवं सार्थक परिवर्तन नहीं किया। 2014 में भाजपा के नेतृत्व में राजग सरकार ने प्रथम बार कृषि एवं कृषकों को मुख्यधारा में लाने की पहल की। 2014 एवं 2019 के लोकसभा चुनाव के दलीय घोषणापत्रों में कृषक वाद–विषय मुख्य रुप से रेखांकित हुए। प्रधानमंत्री श्री नरेन्द्र मोदी की अहम पहलों के पश्चात कृषि क्षेत्र को अर्थव्यवस्था में वरियता मिलने लगी। भाजपा के चुनाव घोषणपत्र में वर्ष 2022 तक कृषकों की आय को दुगना करने की सुनिश्चिता को भी प्रधानता मिलने लगी। इसी संदर्भ में भाजपा की राजग सरकार ने कृषि सुधार के लिए तीन महत्वपूर्ण विधेयकों को संसद से वर्ष 2020 में पारित कर एक राष्ट्रनीति के रुप में कृषकों को स्वामित्व एवं स्वायतता प्रदान करने का प्रयास किया।

कृषि सुधार के इन विधेयकों का जहाँ भारत के लगभग समस्त राज्यों के कृषकों ने स्वागत किया, वहीं पंजाब, हरियाणा एवं उत्तर प्रदेश के कुछ कृषक संगठनां ने राजनीति से प्रभावित हो इनका पुरजोर विरोध किया। विरोध प्रदर्शन की इस प्रक्रिया में प्रतिशोध की गूंज राष्ट्र मार्गों को अवरुद्ध करने तथा असामाजिक तत्वों के सम्मिलन द्वारा जनजीवन असुविधा के रुप में प्रकट होने लगी। विपक्षी दलों द्वारा कृषकों को प्रत्यक्ष एवं परोक्ष समर्थन ने इस विरोध के स्वर को विश्व स्तर पर भी प्रचारित एवं प्रसारित कर दिया। केन्द्र सरकार की कृषक संगठनों से निरंतर वार्ताओं के पश्चात भी गतिरोध बना रहा।

विषय की समसामयिकता को ध्यान में रखते हुए केंद्र ने 'कृषक आंदोलनः रणनीति, राजनीति एवं राष्ट्रनीति' विषय पर लेख आमंत्रित किये। आठ उत्कृष्ट लेखों को सम्पादकीय मंडल ने चयनित किया जो आप सभी के समक्ष एक प्रकाशित पत्रिका के रूप में उल्लेखित हो रहे हैं। ये समस्त लेख मौलिक होने के साथ–साथ स्वातन्त्र्योत्तर भारत के परिवर्तनीय आयामों को भी संबोधित करने का प्रयास कर रहे हैं। स्वतंत्र चिंतन पर आधारित लेखकों के विचार उनकी रचनात्मकता, सृजनात्मकता एवं मौलिकता को भी इंगित करते हैं।

वर्ष 2020 के संश्लेषण के इस दिसम्बर माह के बारहवें अंक में प्रकाशित लेखों पर पाठकों की प्रतिक्रियाओं के आधार पर ही हम अपने आगामी समसामयिक तथा महत्वपूर्ण अंक में और अधिक गुणात्मक परिवर्तन लाने का प्रयास करेंगे।

संपादक मंडल

बृहस्पतिवार, 14 जनवरी 2021

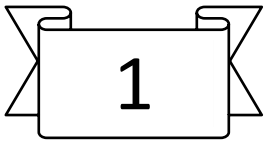

1

कृषक आंदोलनः दशा एवं दिशा एवं राजनीति

डॉ. अर्चना सौशिल्या

एसोसिएट प्रोफेसर, अदिति महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

दिनांक 11 जनवरी 2020 को सुप्रीम कोर्ट ने केन्द्र सरकार को अपने रवैये में बदलाव लाने तथा कृषकों की समस्याओं को कमिटी के सामने रखे जाने की बात कही। चीफ जस्टिस रस.ए. बोबाडे ने कहा : 'कृषक मामले में सुप्रीम कोर्ट आज ी सुनवाई बंद कर रहा है। आदेश पारित होगा एवं फिलहाल कानून के अमल पर रोक लगे।' वस्तुतः सुप्रीम कोर्ट ने 'कानून की योग्यता' (मेरिट) पर प्रश्न नहीं किया अपितु यह चिंता मौजूदा ग्राउंड स्थिति को लेकर दिखाई है। कृषक कानून वापस करना चाहती है एवं सरकार मुद्दों पर बात करना चाहती है अतः कमिटी की बातचीत जारी करने तक कानून के अमल पर 'स्टे' लगा रहेगा। सुप्रीम कोर्ट यह आदेश नहीं दे सकती है कि नागरिक प्रदर्शन नहीं करें, पर चिंता कर विषय है स्थिति बुरी होती जा रही है। कृषक आत्महत्या कर रहे है, , अतः उन्हें अपनी समस्या लेकर कमिटी के पास जाना होगा और कमिटी की रिर्पाट आने पर फैसला किया जायेगा।

प्रश्न यह उठता है आखिर यह हंगामा क्यों हुआ? क्यों सुप्रिम कोर्ट, सरकार के कृषकों की समस्या के समाधान की प्रक्रिया से नाराज दिखी, क्यों सुप्रीम कोर्ट को यह कहना पड़ा कि केन्द्र सरकार यह जवाब दे कि कानून पर 'रोक' सरकार लगायेगी या उच्चतम न्यायालय लगा दे?

इस गंभीर विषय वस्तु को समझने के लिए उन तीन कानूनों का अध्ययन अवश्यक है। सभी को विदित है— जून के महीने में कृषि कानून को पास किया गया जिसके विरोध में कृषक 47 दिनों से दिल्ली के बार्डर पर प्रदर्शन कर रहे हें। इस विधेयक में तीन कानून हैं—

(क) आवश्यक वस्तु (संसोधन) अधिनियम... प्रारंभिक समय में जब कोई कृषक या बिचौलिया आवश्यक वस्तुओं (चावल, गेहूँ, तेल) को अपने पास जमा करके रखा लेता तो उसके दाम बढ़ जाते हैं और इसके संबंध में 1955 में कानून ही बनाया गया था— परंतु जून 2020 में एन.डी.ए. सरकार ने अध्यादेश के द्वारा 'भंडारण' की आजादी दे दी, मात्र 'आपदा परिस्थिति' एवं युद्ध के समय इस पर पाबंदी लगाई जा सकती ह।

विरोधियों का मत विचारणीय है कोरोनाकाल में ऐसे बिल को ध्वनिमत से पारित करने की आवश्यकता क्यो थी? महज इसलिए कि लोग कोरोना के समय सड़कों पर विरोध ना करे, परंतु कृषक सडक़ों पर उतर आया और उनकी मौतों से जनता दुखी भी होने लगी है।

सरकार अपना पक्ष भी रखती जा रही है– कि इस 'भंडारण' से सभी लाभान्वित होगें, वह अपनी उपज अपने पास रख ले, पर गरीब कृषक की अपनी दलीले हैं कि एक छोटी सी झोपड़ी में वह अपने अनाजों को न तो रख सकता है ना ही उन्हें सर्दी बरसात से बचा सकता है और सरकार ने 'भंडारण' की आजादी देकर कालेबजारी की पूरी छूट दे दी।

दूसरे कानून, 'मूल्य आश्वासन पर बंदोबस्त सुरक्षा एवं समझौते की चर्चा करता है, जो बहुत हद तक कृषक के पक्ष मे दिखता है। इसमें अनुबंध कृषि की चर्चा की गई हैं अर्थात किसी 'अमुक वस्तु ' की खेती करने से पहले ही निजी कंपनी कृषकों के साथ उस वस्तु के उत्पादन का दाम, उत्पादन से पहले तय कर लेगी, इस तरह वस्तु छोटे छोटे कृषक एक विस्तृत जगह में उसी वस्तु का उत्पादनकरके पहले से निर्धारित दाम पर उसे बेचेगे।इससे कृषकों को एक निश्चित रकम मिलने का आश्वासन होगा। एवं उस मंडी में जाकर बेचने और 'बोली लगाने' की परेशानी से मुक्ति मिल जायेगी।

परंतु विरोध यहाँ भी है और कृषक सुधार भी चाहता है। अगर अमुक वस्तु (गेहूँ प्रति किलो 25 रुपये तय हो गया) एवं बाद में दाम बढ़ गये तो निजी कंपनी 'अनुबंध' के अनुसार उसे 25 रुयपे पति किलों ही खरीदेगी और कृषक नुकसान में जायेगा।दूसरी अशंका यह है– अगर कंपनी अपने 'वादे' से हट गई एवं 20 रुपये प्रति किलों की ज़िद को तो हो ऐसी हालत में झगड़ों का निपटारा कौन करेगा?सरकार ने बिना कृषकों से चर्चा किये, इन 'अनुबंध' को बनाने की जिम्मेदारी 'मंडी के सरकारी अधिकारियों को दे दी है जो नि'संदेह इन 'प्राइवेट कंपनी का साथ देगे। चंद लालच के कारण गरीब कृषकों का हक मारेंगे। यहाँ एक राय यह आई थी कि इस अनुबंध की जिम्मेदारी 'गाँव के मुखिया को अगर दी जाती है तो मुखिया हमेशा कृषकों का हितैषी बनेगा, अपने पारस्परिक रिश्तों एवं राजनीतिक तौर पर भी यह मुख्या अपने लोगों के प्रति जिम्मेदारी भी निभायेगा क्योंकि यही कृषक उसके बोटर भी होंगे।

यह 'अनुबंध–खेती– देश के लिए कोई नई बात नहीं है क्योंकि इसकी शुरूआत मनमोहन सिंह के समय (2012) से ही हो चुकी थी परंतु इस बार कानून के द्वारा लागू करने से इसका इस्तोल बड़े पैमाने पर किये जाने का प्रावधान है और कृषक इन 'प्राइवेट ऐजन्सियों से डरे बेठै हैं।

जहाँ तक 'तीसरे कानून' की बात है सारे हंगामें की जड़ में यह कृषि उत्पाद व्यापार और वाणिज्य कानून ही है जिसके अंर्तगत अब कृषक मंडी के अलावा उसे जहाँ अपना 'उत्पाद बेचना हो बेच सकता है। सत्यता तो यह रही है मात्र 6 प्रतिशत ही कृषक मंडी में जाता रहा है– अन्य 94 प्रतिशत कृषक हमें बड़े कृषकों को, साहूकारों को चौराहों पर बेचते रहे हैं।

झगड़े व प्रदर्शन का मूल कारण बिचौलियों की समाप्ति पर है। प्रारंभ में अड़तियों (बिचौलियों) की जरूरत थी जग गरीब कृषक की पूरी फसल साहूकार कर्ज के नाम पर ले लेते थे, तब कृषक 'अड़तियों' को बेचकर अपना कर्ज उतार देते थे। तब सरकार ने **APMC (Agriculture Product Market Committee)** मंडी का निर्माण करके लाइसेंस धारियों को ही मंडी से सामान खरीदने का अधिकार दिया था। यहाँ अडितियाँ (बिचौलिया) कृषकों को उनके वस्तुओं (उत्पादकों) की बोली लगाकर खरीदते थे।इसके साथ ही सरकार **MSP** पर वसतुओं को खरीदती थी एवं राशन की दुकानों पर सस्ते दामों परबेचती थी। समयानुसार **MSP** के कारण अर्थव्यवस्था पर अत्यंत 'भार' भी आये जिसे सभी सरकारों ने महसूस भी किया, परंतु इसकी गाज मोदी सरकार पर गिरी एंव उन्हें कृषक विरोधी करार दे दिया गया। कृषकों की माँगे कहाँ तक जायज हैं कहाँ तक नजायज, यह एक विचारणीय बिंदू है?

कृषक अशंका व डर कर बैठा है कि सरकार न्यूनतम समर्थ मूल्य' खत्म कर देगी और इसी कारण वह सरकार के दिये 'आश्वासनों पर विश्वास नहीं कर रही। निजी कंपनी के साथ 'अनुबंध' नहीं बनाना चाहती, क्योंकि खेती से पहले ही वह बँध जायेगे और बाद में भी शोषित होने का पूरा डर है। सरकारी पदाधिकारी ऊपर से और शोषण करेंगे। कृषकों को निजी कंपनियों से जहाँ शोषण का खतरा है वहीं उन्हें 'अड़तियों' से मदद की उम्मीद भी है – जो मुसीबत के समय उनकी मदद को भी तैयार रहता है। और इन्हीं 'अड़तियों' ने बहुत हद तक कृषकों में सरकार के प्रति अविश्वास पैदा कर दिया है कि 'न्यूनतम समर्थन मूल्य' **(MSP)** धीरे–धीरे सरकार खत्म कर देगी, और निजी कंपनियां अनुबंध के द्वारा अपनी मनमानी करेगी एवं बिचौलियों के साथ साथ ये कृषक भी बर्बाद हो जायेगे उनके बने बनाये गोदाम भी व्यर्थ हो जायेंगे।

सरकार एम.एस.पी. से पल्ला झाड़ लेगी क्योंकि सरकार अपना फायदा देख रही है– क्योंकि एम. एस.पी. के कारण केंद्र सरकार को देढ़हजार करोड़ रुपये का नुकसान होता है– और इसको 'सान्ताकमिटी– ने भी अपनी रिपोर्ट में कहा था। कृषक इस को स्वीकारना नहीं चाहता जितना अनाज यू.पी.ऐ. ने खरीदा उससे 30 गुणा ज्यादा एन.डी.ए. सरकार ने खरीदा। स्वयं यू.पी.ए. ने

अपने चुनावी घोषणपत्र में APMC कानून को खत्म करने की बात कही और तत्कालिक कृषि मंत्री शरद पवार ने राज्य सरकारों को पत्र भी लिखा, फिर यही कांग्रेस विपक्ष में आने पर कृषको को क्यों भड़का रही है। विपक्ष आलोचना करे मंजूर हो सकता है– परंतु गुमराह करके 'गरीबों का जीवन' दाँव पर लगाना प्रजातांत्रिक मानसिकता के लिए उचित नहीं दिख पड़ता। उन्हें विकास की रणनीति समझाने के बजाए राजनीति करना क्या स्वस्थ प्रजातंत्र है?

राजनीतिक माहौल

किसी भी महत्त्वपूर्ण फैसले को हर सरकार गेमचेन्जर कहती है एवं विपक्ष विरोध करता है। एम. एस.पी को देश को अर्थव्यवस्था पर भार मात्र भाजपा के कुछ नेताओं ने नहीं कहा अपितु कांग्रेस भी बिचौलियों (अड़तियाँ) के रवैये से कृषकों के शोषण के खिलाफ रही है जिसकी पुष्टि संसद में कहे गये भाषणों से हो जाती है। परंतु समस्या तो यह कि 'बिल्ली के गले में जो घंटा बांधे–दोषी वही होगा और उसी का भुगतान वर्तमान भाजपा कर रही है।

शिरोमणि अकाली दल के नेता भी समयानुसार पासा पलट दिये एवं इन तीनों कानूनो के विरोध में प्रदर्शन पर बैठे गये जो प्रारंभ में इस कानून पर सरकार के साथ थे, परंतु अपन `क्षेत्रके कृषकों के उग्र स्वभान एवं अड़तियों का विरोध करने की क्षमतानहीं रख पाये जो उनका बहुत बड़ा वोट बैंक है–

मुख्यविपक्षी दल, कांग्रेस से विरोध जायज है अतः वह इसे कोई भी 'जामा' पहनाकर सरकार को 'जिद्दी' घमंडी` अन्तदाताओं का अपमान करने वाली सरकार नि'संदेह कह सकती है। 47 दिनों तक आंदोलन कर रहे कृषकों को गुमराह किया जा चुका है जब महिलाओं बच्चों को तीन कानूनों की समझ नहीं सिर्फ बोलने पर बाध्य कर दिया– यह कानून काले हैं 'हमारी जमीन छिन जायेगी।' राहूल गांधी ने साफ कहा कि यह कानून 'कृषक विरोधी है।' अतः मोदी जी का यह कहना कि यह कृषकों के हित में है यह गलत है। अगर यह उनके हित में ह तो कृषक रोड़ पर क्यों खड़े हैं? हर मुख्यायलों की घेराबंदी क्यों की जा रही है। कृषकों में इतना गुस्सा क्यों है? उनकी शक्ति का अंदाजा सरकार को नहीं है, कृषक डरेगा नहीं। विपक्ष ने यह भी आरोप लगाया कि मुख्यधारा की मीड़िया द्वारा इस आंदोलन में खालिस्तानियों एवं आतंकवादियों के होने के भी आरोप लगाये गये, और मीड़िया के द्वारा हमसबने कुछ लोगों को आजाद कराने के पोस्टर भी देखें। अर्थात् इन मुद्दों की आड़ में कुछ लोगों ने अपने भी हाथ साफ करने की कोशिश कर ली थी।

कृषकों ने अदानी, अम्बानी, पर हमला बोल दिया। राहुल गांधी ने पहले ही सरकार को 'सूटबूट की सरकार' कह कर बदनाम किया है और कृषकों ने 'जियों के टावर तोड़ कर पूरे मोबाइल नेटवर्क को ध्वस्त कर दियपा। अदानी अम्बानी की आय पिछले सालों में दुगुनी हो गई है और कृषकों को डर है यह लोग उनका खुलकर शोषण करेंगे क्योंकि उनपर मोदी सरकार की पूरी छत्र छाया है। शाहीन बाग पर संवाद करने सरकार आगे नहीं आई परंतु इस मामले पर सरकार बाते कर रही है, आखिर क्यों? निःसंदेह इन भोले–भाले कृषकों को अड़तियों (बिचौलियों) ने गुमराह कर रखा है– भविष्य में होने वाली शंकाओं को 'अवश्यमभावी घटना' बना कर पेश किया, अपने 'हित' को बचाने हेतु इन कृषकों को अपना हथियार बना दिया और इनकी पूरी फौज को भीड़ एवं प्रदर्शन बना कर सरकार के सामने खड़ा कर दिया। हम आप, सरकार, उच्चतम न्यायालय सभी बातों से अवगत है – परिचित है कि ऐसा कोई प्रश्न नहीं जिसका समाधान नहीं हो बशर्ते समाधन पाने की राह बनाई जाये। 'मंशो' पर भविष्य में हौन वाली घटनाओं पर समाधान नहीं, दुर्घटनायें होती है। और यह घटना पिछले 47 दिनों से गर्म है– जहाँ कृषक तकलीफ में है

इस समस्या का समाधान 'कानूनों के रद्द करने से अगर हो सकता तो एन.डी.ए. सरकार शायद वर्षों से लटके हुए इस सुधार को नहीं लाती, अब देखना यह है उच्चतम–न्यायलय की कमिटी क्या निर्णय लेती है? सरकार कानून पास करते समय यह अनुमान लगाना भूल गई कि जिन लोगो का 'हित मारा जायेगा। वह अड़चने पैदा करेंगे और सरकार को अपने उद्देश्यों को सही समय पर, सही जगह पर सही तरीके से समझाना था पर सरकार की यही 'चूक' लंबे समय से इंतजार की जाने वाली ''सुधार की रणनीति'' पर भारी पड़ गई। सरकार के पास अभी अनेक जिम्मेदारियाँ और होगी मसलन कृषकों को जमीन के निरीक्षण के रिपोर्ट के आधार पर विभिन्न फसलों ;बी बतवचेद्ध का उत्पादन करने के लिए प्रोत्साहित करना जिससे उनकी आय में वृद्धि हो और कृषक का ना तो शोशण हो ना ही पलायन।

अब देखना है कि इस कृषक आंदोलन की दिशा और दशा देश को किस ओर लेकर जाती है।

♦♦♦♦♦

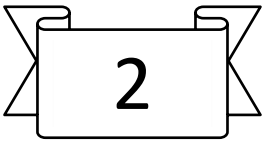

कृषक आंदोलनः इतिहास और राजनीतिक सम्बन्ध

डॉ. अमित अग्रवाल

असिस्टेंट प्रोफेसर (वाणिज्य), राजकीय रजा स्नातकोत्तर महाविद्यालय, रामपुर, उत्तर प्रदेश

ना यह कृषक आंदोलन पहला है और ना ही अंतिम। कृषक की समस्याएं, नीतियाँ, योजनाएं, अधिनियम, प्रौद्योगिकी और व्यवसायिक वातावरण आदि परिवर्तनशील है। कृषक आंदोलन देश को एक दिशा देते रहे हैं और भविष्य में भी एक दिशा देते रहेंगे। कृषक आंदोलन से कृषक नेता उत्पन्न हुए हैं, जिन्होंने बाद में राजनोति का दामन थाम लिया। कृषक परिवारों और आंदोलनों से देश को प्रधानमंत्री, मुख्यमंत्री और केंद्रीय एवं राज्य मंत्री भी मिले हैं। कृषक अपनी खुशी से आंदोलन नहीं करते अपितु कृषि क्षेत्र की समस्याएं उन्हें आंदोलन करने के लिए बाध्य करती है। आज कृषकों को अपन वजूद के लिए आंदोलन करना पड़ रहा है। भूमि कृषक की माँ है। कृषक को अनुबंध कृषि के माध्यम से अपनी भूमि छिनने का डर है। न्यूनतम समर्थन मूल्य खत्म होने के डर से कृषक भय हैं कि कहीं उनको अपनी फसल कौड़ियों के भाव ना बेचनी पड़े।

कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सरलीकरण) विधेयक 2020	कृषि (सशक्तिकरण और संरक्षण) कीमत अश्वासन और कृषि सेवा करार विधेयक, 2020	आवश्यक वस्तु संशोधन विधेयक 2020
सरकार का तर्कः कृषकों को अपनी उपज मंडी के अतिरिक्त अन्य स्थान पर बेचने की सुविधा भी मिलेगी। भारत में 42000 मंडियों की आवश्यकता है किंतु देश में कुल 7000 मंडिया ही हैं। कृषि क्षेत्र में निवेश को बढ़ावा मिलेगा। कृषकों का तर्कः मंडियों के खत्म होने से और न्यूनतम	सरकार का तर्कः कृषक और निजी कंपनियों के बीच समझौते द्वारा कांटेक्ट फॉर्मिंग की अनुमति से कृषि क्षेत्र में पूंजी का आगमन होगा और कृषकों को अच्छे बीज और आधुनिक प्रौद्योगिकी आदि का लाभ मिलेगा। कृषकों का तर्कः दोनों पक्षों के मध्य विवाद की स्थिति में न्यायिक प्रक्रिया लंबी होगी। कृषक अनपढ/न्यायालय	सरकार का तर्कः इससे आम कृषकों को फायदा ही तो है। वे सही दाम होने पर अपनी उपज बेचेंगे. कृषकों का तर्कः सामान्य कृषकों को गोदाम बनवाकर नहीं रखते हैं। फायदा उन पूंजीपतियों को

समर्थन मूल्य की गारंटी ना होने से कृषकों को उपज का सही दाम नहीं मिल पाएगा।	की भाषा से अनभिज्ञ हैं।	जरूर हो जाएगा। वे अब आसानी से सस्ती उपज खरीद कर स्टोर करेंगे और जब दाम आसमान छूने लगेंगे तो बाजार में बेचकर लाभ कमाएंगे।

भारतीय अर्थव्यवस्था में कृषि क्षेत्र का योगदान निरंतर कम होता चला जा रहा है। आजादी के 73 वर्षों के उपरांत भी सभी कृषि करने वालों को भूमि का मालिकाना हक प्राप्त नहीं हुआ है। असमान भूमि वितरण है। कृषि फसल के मूल्यों में अत्यधिक उच्चावचन देखने मिलते हैं। उदाहरण कभी आलू पाँच रुपए किलो मिलता है और कभी वही आलू 60 रुपए किलो तक बिकता है। भारत में उच्च गुणवत्ता वाले अच्छे बीजों का अभाव है। कई बार कृषकों को इस प्रकार के बीज प्राप्त हो जाते हैं कि वे अंकुरित नहीं होते हैं अथवा बांझ होते हैं। यदि बीज जेनेटिक मॉडिफाई नहीं है तब उनमें रोग लगने की संभावना अधिक रहती है भारत में मॉनसून की सटीक भविष्यवाणी नहीं की जा सकती इसलिए भारत की कृषि को मानसून का जुआ भी कहते हैं।

भारत के एक तिहाई क्षेत्र में कृषि मानसून पर आधारित है। निरंतर भूमिगत जल का स्तर गिर रहा है, जिससे सिंचाई की लागत में निरंतर वृद्धि हो रही है। ट्यूबेल के माध्यम से सिंचाई करने के लिए विद्यत की आवश्यकता होती है और विद्यत का बिल प्रतिवर्ष निरंतर बढ़ रहा है। पंपिंग सेट से सिंचाई करने पर डीजल की आवश्यकता होती है और भारत में डीजल के मूल्य अत्यधिक बढ़ रहे हैं, जिससे कृषि उत्पादन लागत में अत्यधिक वृद्धि हुई है। वर्ष में तीन फसलों का उत्पादन करने के कारण मिट्टी की उर्वरक क्षमता में कमी आई है। कृषकों ने अत्यधिक रसायनिक खादों का प्रयोग किया है और इन खादों का मूल्य अत्यधिक तेजी से बढ़ा है। उच्च गुणवत्ता वाले खाद बाजार में उपलब्ध नहीं है, मिट्टी की आवश्यकता के अनुसार खादों का सही अनुपात भी कृषक को ज्ञात नहीं होता। छोटे और सीमांत कृषक मशीनीकरण का लाभ उठाने में में पीछे रह गए हैं।

भारत में भंडारण सुविधाओं के अभाव में लाखो टन सब्जी और फल प्रतिवर्ष सढ़ गलकर खराब हो जाती हैं। देश के एक कोने से दूसरे कोने तक या अन्य स्थान पर फसल पहुंचाने के लिए सस्ते परिवहन की सुविधा नहीं है और कृषकों को मंडियों तक अपनी फसल पहुंचाने के लिए महंगे परिवहन का उपयोग करना पड़ता है। कई बार जो मूल्य बाजार में होता है उससे अधिक

परिवहन को लागत होती है। भारत में कृषि उत्पादन के लिए जो लागत आती है उसके लिए कायशील पूंजी की कमी होती है। संस्थागत वित्त व्यवस्था ना होने पर कृषकों को असंगठित क्षेत्र से पूँजी की व्यवस्था करनी पडती है जिससे कई बार कृषक ऋण ग्रस्त हो जाते हैं। प्राकृतिक आपदाएं और भी कृषकों की समस्याओं को बढ़ा देती हैं। कृषि राज्य और केंद्र दोनों का विषय है और यह समवर्ती सूची में आता है। एपीएमसी कानून को पारित करना राज्यों का अधिकार है।यह भारत के फेडरल स्ट्रक्चर (संघवाद) को कमजोर करने वाला कानून है।

भारत में कृषक आंदोलन लंबे समय से चले आ रहे हैं। देश में आजादी के पहले और उसके बाद कृषकों के कई ऐसे बड़े आंदोलनों हैं, जिन्होंने शासकों की जड़ें हिला दी। भारत में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के आंदोलन की शुरुआत चंपारण के नीलहा कृषक और गुजरात के खेड़ा के कृषकों की समस्याओं से हुई। सरदार वल्लभ भाई पटेल को सरदार की उपाधि भी कृषक आंदोलन के कारण फरवरी 1926 में बारदोली की महिलाओं ने दी। यदि देश खुशहाल है और उसके कृषकों को फसल का उचित मूल्य मिल रहा है, तब वे संघर्ष क्यों करेंगे। वामपंथ की राजनीति का चेहरा रहे हरकिशन सुरजीत कृषक आंदोलन से निकलकर राजनीति में आए और उन्होंने पंजाब में कृषक सभा की नींव रखने में अपना योगदान दिया।

भारत के रक्षा मंत्री राजनाथ सिंह कृषक आंदोलन से भले ही राजनीति में नहीं आए हो किंतु वह कृषक परिवार से संबंध रखते हैं। नाराज कृषकों से बातचीत करने में राजनाथ सिंह अपनी भूमिका निभा रहे हैं। पंजाब में अकाली दल के संस्थापक प्रकाश सिंह बादल जो चार बार पंजाब के मुख्यमंत्री भी रहे हैं कृषक आंदोलन का समर्थन कर फिर सुर्खियों में हैं। चौधरी चरण सिह कहते थे कि देश की समृद्धि का रास्ता गांव की खेतों और खलिहानों से होकर गुजरता है। चौधरी चरण सिंह उत्तर प्रदेश के मुख्यमंत्री से लेकर देश के प्रधानमंत्री तक रहे। चौधरी चरण सिंह की राजनीति राजनीतिक विरासत को उनके बेटे चौधरी अजीत सिंह और पौत्र जंयत सिंह आगे बढ़ा रहे हैं। कृषक आंदोलन से निकले चौधरी देवीलाल ने हरियाणा ही नहीं बल्कि देश की राजनीति में अपनी अलग पहचान बनायी। उनके परिवार ओम प्रकाश चौटाला, अजय चौटाला, अभय चौटाला और दुष्यंत चौटाला ने हरियाणा में अपनी पहचान बनाई। राजीव गांधी सरकार में कृषि मंत्रालय की जिम्मेदारी संभाल रहे बलराम जाखड़ ने कृषक नेता के रूप में अपनी जगह बनाई।

बंसीलाल ने 1968 से लेकर 1975 तक हरियाणा के मुख्यमंत्री के रूप में एग्रीकल्वर विकास के लिए अथक प्रयास किए। यूपी के गाजियाबाद में जन्मे राजेश पायलट ने अपनी कर्मभूमि

राजस्थान को बनाया। एनसीपी प्रमुख शरद पवार ने महाराष्ट्र में कृषकों के हक के लिए अपनी राजनीतिक जिंदगी लगा दी। यूपीए सरकार में कृषि मंत्री रहे वसंत दादा पाटिल 60 के दशक में महाराष्ट्र के मुख्यमंत्री भी रहे। पूर्व प्रधानमंत्री एच.डी. देवगौड़ा भी कर्नाटक के कृषक परिवार से आते हैं। स्वाभिमानी पक्ष के संयोजक राजू शेट्टी ने महाराष्ट्र में कृषकों की आवाज को बुलंद किया। कृषक परिवार में जन्मे मुलायम सिंह यादव यूपी के मुख्यमंत्री रहे तो कृषक और पशुपालकों को ही अपने मुख्य एजेंडे में रखा जिसके कारण उन्हें धरतीपुत्र कहा गया। उन्होंने कृषकों की सिंचाई के बिल माफ किए और गांव के विकास को प्राथमिकता दी। सोमपाल शास्त्री वाजपेयी सरकार में कृषि मंत्री रहे उन्होंने अपने कार्यकाल में कृषकों को क्रेडिट कार्ड की सुविधा दी, चीनी मिलों को लाइसेंस से मुक्त किया, राष्ट्रीय कृषि बीमा योजना लागू की और गेहूँ के समर्थन मूल्य में 19.6 प्रतिशत की वृद्धि कर इतिहास रचा। कृषक परिवार से आए साहिब सिंह वर्मा ने दिल्ली को अपनी कर्मभूमि बनाया और ग्रामीण दिल्ली का विकास किया। आंध्र प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री राजशेखर रेड्डी की पहचान भी कृषक नेता के तौर पर रही है, आज भी उनकी जयंती को कृषक दिवस के रूप में मनाते हैं। उनके निधन के बाद जगन मोहन रेड्डी ने अलग पार्टी बनाई और आज वह आंध्र प्रदेश में सत्ता पर काबिज हैं।

देश के इतिहास में कृषक आंदोलन

पबना विद्रोह	बंगाल में जमींदारों के द्वारा कृषकों पर कानूनी सीमा से बहुत अधिक करारोपण किया जाता था। इसके विरोध में 1873 –76 के बीच में कृषक आंदोलन हुआ जिसे पबना विद्रोह के नाम से जाना जाता है।
दक्कन का कृषक आंदोलन	वर्ष 1874 के दिसंबर में एक सूदखोर कालूराम ने कृषक बाबा साहिब देशमुख (महाराष्ट्र) के खिलाफ अदालत से घर की नीलामी की डिक्री प्राप्त कर ली। इस आंदोलन के अन्तर्गत कृषकों ने महाजनों का सामूहिक बहिष्कार प्रारम्भ किया।
टाना भगत आंदोलन	झारखंड में भी आजादी के दौरान टाना भगत ने 1914 में आंदोलन की शुरुआत की थी। यह आंदोलन लगान की ऊंची दर तथा चौकीदारी कर के विरुद्ध था।
एका आंदोलन	उत्तर प्रदेश के हरदोई, बहराइच एवं सीतापुर जिलों में लगान में वृद्धि एवं उपज के रूप में लगान वसूली को लेकर अवध के कृषकों ने 1919 में एका आंदोलन नामक आंदोलन चलाया।
मोपला विद्रोह	केरल के मालाबार क्षेत्र में मोपला कृषकों द्वारा 1920 में विद्रोह किया. शुरुआत में यह विद्रोह अंग्रेज हुकूमत के खिलाफ था। मुख्य नेता के रूप में अली मुसलियार उभरकर सामने आए।
चंपारण का	चंपारण का कृषक आंदोलन अप्रैल 1917 में हुआ था. गांधी ने दक्षिण अफ्रीका में सत्याग्रह

कृषक आंदोलन	और अहिंसा के अपने आजमाए हुए, अस्त्र का भारत में पहला प्रयोग चंपारण की धरती पर ही किया। तिनकठिया नामक जबरन नील की खेती कराने की प्रथा समाप्त हुई। दीन बंधु मित्र द्वारा 1860 में लिखा गया नील दर्पण, निलहे कृषकों की व्यथा का एक जीवंत उल्लेख है।
कूका कृषक आंदोलन	कूका संगठन के संस्थापक भगत जवाहरमल थे। 1872 में इनके शिष्य बाबा रामसिंह ने कृषि संबंधी समस्याओं के खिलाफ अंग्रेजों का सामना किया।
रामोसी कृषकों का आंदोलन	जमींदारों के अत्याचारों के विरुद्ध विद्रोह महाराष्ट्र में वासुदेव बलवंत फड़के के नेतृत्व में रामोसी कृषकों ने आंध्रप्रदेश में सीताराम राजू के नेतृत्व में यह विद्रोह हुआ (1879)।
खेड़ा सत्याग्रह	सन् 1918 ई. में गुजरात जिले की पूरे साल की फसल मारी गई। यह सत्याग्रह गांधीजी का पहला आन्दोलन था। सरकार ने गरीब कृषकों से लगान की वसूली बंद कर दी।
बारदोली सत्याग्रह	सूरत (गुजरात) के बारदोली तालुका में 1928 में कृषकों द्वारा श्लगानश न अदायगी का आंदोलन चलाया गया। इस आंदोलन में श्कुनबी–पाटीदारश जातियों व सभी जनजाति के लोगों ने हिस्सा लिया। इस आंदोलन का नेतृत्व सरदार पटेल ने किया था।
कृषक सभा आंदोलन	फरवरी 1918 में गौरीशंकर मिश्र ,इंद्रा नारायण द्विवेदी तथा मदन मोहन मालवीय ने उत्तर प्रदेश कृषक सभा का गठन किया। अवध कृषक सभा ने कृषकों को बेदखल जमीन न जोतने और बेगार न करने की अपील की।
तेभागा आंदोलन	कृषक आन्दोलनों के इतिहास में सन् 1946 का बंगाल का तेभागा आन्दोलन सर्वाधिक सशक्त आन्दोलन था, 50 लाख कृषकों ने भाग लिया।
तीन सुधारवादी कानूनों के विरोध में कृषक आंदोलन	तीन सुधारवादी कानूनों के विरोध में कृषक आंदोलन (2020–21) सड़कों पर आंदोलन कर रहे हैं। कृषकों को आशंका है कि इन सुधारों के बहाने सरकार एमएसपी (न्यूनतम समर्थन मूल्य) पर फसलों की सरकारी खरीद और वर्तमान मंडी व्यवस्था से पल्ला झाड़कर कृषि बाजार का निजीकरण करना चाहती है। कृषक निजी क्षेत्र द्वारा भी कम से कम एमएसपी पर फसलों की खरीद की वैधानिक गारंटी चाहते हैं।

विचारणीय कि कृषक क्यों आंदोलन कर रहा है जो कृषक देश की 135 करोड़ आबादी का पेट भर रहा है आज वह अपनी उपज का सही दाम भी हासिल नहों कर पा रहा है। भारतीय रिजर्व बंक के आंकड़ों के अनुसार वर्ष 2010–11से के 2019–20 बीच कृषि क्षेत्र में सार्वजनिक क्षेत्र का निवेश सकल घरेलू उत्पाद के 1 प्रतिशत से भी कम रहा है। यह देखते हुए कि देश की 52 प्रतिशत से अधिक की आबादी रोजगार के लिए कृषि क्षेत्र पर निर्भर है, सरकार द्वारा क्षेत्र की जानबूझकर अनदेखी करना देश के विकास को अवरुद्ध करने जैसा है। कर्ज न चुकाने पर कृषकों के ऊपर क्रिमिनल चार्ज लगाए जाते हैं। कृषकों के आंदोलन पर राजनीति तो बहुत हो रही है किंतु उनके उद्धार के लिए अब राष्ट्रीय नीति बनाने की आवश्यकता है।

निर्भर है सरकार द्वारा क्षेत्र की जानबूझकर अनदेखी करना देश के विकास को अवरुद्ध करने जैसा है कर्ज न चुकाने पर कृषकों के ऊपर क्रिमिनल चार्ज लगाए जाते हैं किंतु और वो रुपए

के एनपीए वाले उद्योगपति दिवालिया हो कर आराम से कर्ज से बच जाते हैं। कृषकों की भूमि से आए कृषक नेता भी कृषि क्षेत्र का उद्धार करने में पूर्णता सफल नहीं हो पाए। कृषकों के आंदोलन पर राजनीति तो बहुत हो रही है किंतु उनके उद्धार के लिए अब राष्ट्रीय नीति बनाने की आवश्यकता है।

♦♦♦♦♦

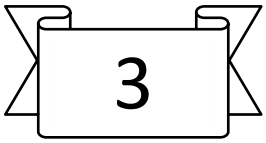

3

लोकतंत्र, विमर्श एवं मतभेदः कृषक आन्दोलन के विशेष सन्दर्भ में

डा० अभिषेक नाथ

असिस्टेंट प्रोफेसर, एमएलटी महाविद्यालय, सहरसा

लोकतंत्र और लोकतान्त्रिक नीति निर्माण इस बात पर निर्भर करता है कि जनता की सहभागिता उपरोक्त प्रक्रिया में कितनी ज्यादा है। वर्तमान लोकतान्त्रिक देशों में ऐसा देखा गया है कि जबरदस्त जनसमर्थन से सत्ता प्राप्ति के बाद लोकतान्त्रिक सरकारें इस मूल बात को या तो भूल जाती है या दरकिनार कर सत्ता के केन्द्रीकरण का प्रयास करती है। उपरोक्त विचार वर्तमान में संयुक्त राज्य अमेरिका और भारत के लिए काफी सटीक प्रतीत होती है यद्यपि विश्व भर में ऐसे उदाहरणों की कमी नहीं है।

सामान्य तौर पर लोकतान्त्रिक सरकारें लोक नीति निर्माण में जनता की सहभागिता और लोकप्रिय सदन में लोकतान्त्रिक बहसों से बचने का प्रयास करती देखी जा सकती है। कोरोना महामारी से उत्पन्न विशिष्ट परिस्थिति ने ऐसे प्रयासों को उचित अवसर भी प्रदान किया है। संसद में विमर्श और उसकी गुणवता की घटती परम्परा ने लोकतान्त्रिक नीतियों को सामान्य और लोकप्रिय नीति बनने से रोका है।

यद्यपि इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि सरकारें ऐसी नीतियों की वैधता स्थापित करने का दावा अपने चुनावी जनसमर्थन और इस आधार पर राष्ट्र की नीति (राष्ट्रनीति) के रूप में प्रचारित करके करती है। लेकिन जनसमर्थन केवल सत्ता की प्राप्ति ही नहीं है बल्कि वैधतापूर्ण सत्ता को बनाए रखने के लिए एक सतत प्रक्रिया है जिसका आभाव लोकतंत्र में विमर्ष की कमी और फिर मतभेदों को जन्म देती है।

वर्तमान कृषक आन्दोलन इसका एक जवलन्त उदाहरण है जिसकी प्रमुख मांग सितम्बर 2000 में पारित तीन कृषि कानूनों को पूर्ण रूप से समाप्त करने की है। यह व्यापक जनसमर्थन से चुनी गई किसी भी सरकार की वैधता पर एक प्रश्न चिन्ह के समान है। लेकिन आखिर ऐसी स्थिति क्यों बनी? क्या यह एक विशुद्ध रूप से राजनीतिक पैतरेबाजी है या विमर्श की कमी ने मतभेदों को जन्म दिया है?

यह सत्य है कि कृषि उत्पाद विपणन समितियां जिसे सामान्य जन कृषि मंडी कहते है कृषक के उत्पादों की बिक्री से सम्बंधित विमर्शों और विवादों के केंद्र में ब्रिटिश शासन काल से बना रहा है। ब्रिटिश राज ने इसकी स्थापना कपासध्सूत के मूल्य को नियंत्रित रखने और ब्रिटिश कपड़ा मीलों के फायदे के लिए किया था। कृषको को शोषण से बचाने और उनके उत्पाद के उचित मूल्य प्रदान करने के लिए इसमें सुधार पर विचार और प्रयास केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा आजादी के बाद से ही किया जाता रहा है। न्यूनतम समर्थन मूल्य ऐसा ही एक प्रयास और सरकारी नीति रही है। लेकिन इसका लाभ 10 प्रतिशत बड़े कृषक जो मुख्यतरू पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश से है उनको मिलता है क्योंकि भारत में 90 प्रतिशत छोटे और सीमांत कृषक है जिनके पास दो हेक्टेयर से कम भूमि है और जिनकी उपज सीमित है। भारत के कृषि की विकास दर कभी भी 3 प्रतिशत से ऊपर नहीं रही है जो कृषको की बदहाली को अभिव्यक्त करती है। कृषको की दशा और कृषि की दिशा को सुधारने के लिए राष्ट्रीय कृषक आयाग (2004–2007) के अध्यक्ष एम.एस. स्वामीनाथन में कृषको को उनकी कृषि उत्पाद के व्यापक लागत से 50 प्रतिशत ज्यादा मूल्य (सी–2 +50 प्रतिशत) प्रदान करने की सिफारिश की थी।

(C2 ¾ A2+ FL रेंट – इंटरेस्ट)

यातव्य है कि 2004 से 2014 तक कांग्रेस के नेतृत्व में यूपीए की संराकर थी जिसमे आज के लगभग सभी विपक्षी दल सम्मिलित थे और इस आयोग की अनुशंसा पर कोई प्रगति नहीं हुई। इस बीच कई राज्य सरकारों ने मंडी के बाहर खुले बाजार में कृषि उत्पाद बेचने के अपने कानून बनाए। बिहार का उदाहरण इस सन्दर्भ में विशेषकर दिया जाता है। स्मरणीय है कि भारतीय जनता पार्टी ने अपने चुनावी घोषणापत्र में स्वामीनाथन आयोग की रिपोर्ट लागु करने और कृषको की आय को दुगुना करने का वादा किया था। जिसे कृषकों का समर्थन मिला और बीजेपी (एनडीए) भारी बहुमत से जीत कर आयी। लेकिन 2015 में ही सुप्रीम कोर्ट में दायर हलफनामे (एफिडेविट) में सरकार ने **C2+50%** को लागु करने में अपनी असमर्थता जताई। इसके बजाए सरकर तीन ऐसे कानूनों के साथ सामने आई जो नवउदारवादी मार्केट व्यवस्था से कृषि को जोड़ कर कृषि और कृषकों की आय को बढ़ाने का दावा कर रही है।

महतव्पूर्ण यह है कि इन कानूनों को पहले अध्यादेश के द्वारा जून 2020 (कोरोना महामारी काल) में लागू किया गया और सितम्बर 2020 में संसद में संक्षिप्त चर्चा के बाद दो दिनों में लोकसभा और राज्यसभा से पारित कर दिया गया। टीएमसी, सीपीएम, डीएमके आदि विपक्षी दलों ने इसे

सेलेक्ट कमिटी में सभी सम्बंधित पक्षों से व्यापक चर्चा के लिए भेजने की मांग की जिसे नहीं माना गया। अतरू स्पष्ट है कि व्यापक विमर्श के प्रयास को व्यापक जनसमर्थन से चुनी सरकार ने महत्व नहीं दिया। जहा बिहार और केरल जैसे राज्यों में मंडी से इतर व्यवस्था के परिणामो की भी चर्चा हो सकती थी। जहाँ तक कृषको का प्रश्न है तो पूर्व की सरकारों से उचित महत्व कृषि को न मिलने के कारण वर्तमान सरकार पर नए कानूनों पर भरोसा बनाए रखना मुश्किल दिख रहा है। दूसरी तरफ मार्केट के भरोसे कृषि उत्पाद के मूल्यों को छोड़ने का फैसला भारतीय सन्दर्भ में अन्य सेक्टरों में ऐसे ही प्रयासों के अनुभव के आधार पर सही ठहराना मुश्किल है। भारत में शिक्षा और स्वास्थ्य व्यवस्था या रोजगार की स्थिति निजी (प्राइवेट) हाथों में जाने से अमीरी गरीबी की खाई और व्यापक हुई है। भारतीय पूंजीपति प्रतियोगिता के बजाय सरकार से अनुचित लाभों के द्वारा अपने प्रगति पर ज्यादा केन्द्रित रहे है। जिसका उदाहरण पूर्व में टेलीकॉम, कोयला, बैंकिंग, नागरिक उड्डयन जैसे क्षेत्रों में अनुचित व्यवहार और भ्रस्टाचार के रूप मं देखा गया है। अतरू सरकार के वादों पर भरोसा थोडा मुश्किल जरुर है।

लेकिन जिस तरह कृषक आन्दोलन तीनो ही कानूनों के पूर्णतरू समाप्त करने पर अड़े हुए है और इस लेख के लिखे जाने तक जब सुप्रीम कोर्ट ने इन कानूनों के स्थगन और इन मुद्दों की जाँच परख और सम्बंधित पक्षों से चर्चा के लिए कमिटी बनाकर समाधान के प्रयास को भी कृषि संगठनो द्वारा संदेह से देखा जा रहा है वह निश्चित ही लोकतंत्र में विमर्षहीनता और उससे उत्पन्न मतभेदों को रेखांकित और उजागर करती है। वर्तमान प्रधानमंत्री के एकतरफा संवाद की शैली भी लाकतान्त्रिक विमर्शों को आगे बढ़ने में सहायक नहीं है। जनता और संस्था के बीच भरोसा लोकतंत्र का मूल है जिसकी क्षीणता ने उस खालीपन को जन्म दिया है जिसका परिणाम कृषक आन्दोलन है।

♦♦♦♦♦

4

कृषक आंदोलन की आधारभूत मांगो का क्षत्रीय स्तरीय विश्लेषण

आधारभ्त मांगा का अध्ययन

शालिनी सिंह

शोधार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय

एक शोधकर्ता के रूप में वर्तमान कृषक आंदोलन का श्रेत्रीय स्तरीय अध्ययन करना मेरे शोध कार्य के लिए स्वर्णिम अवसर था। यह आंदोलन 'दिल्ली चलो' के नारे से शुरू हुआ था, जिसे धीरे–धीरे देश के विभिन्न भागों से भी समर्थन प्राप्त होने लगा। जिसने इस आंदोलन को अधिक सुदृढ़ बनाने का कार्य किया। मुख्यतः इस आंदोलन की बाग डोर को पंजाब, हरियाणा और पश्चिमी उत्तर प्रदेश के कृषकों द्वारा संभाला गया है। इन कृषकों द्वारा तीन महत्वपूर्ण राज्य की सीमाओं– सिंधु, टीकरी एवं यू.पी गेट को 'घेरो', 'धरना', 'रास्ता रोको' और 'प्रदर्शन' जैसे माध्यमों द्वारा अवरोधित करने का कार्य किया गया है। बाहरी रूप इस आंदोलन को सभी पक्षों पर सुनियोजित एवं सुव्यवस्थित रूप में प्रस्तुत करने का प्रयास किया गया है।

इस आंदोलन को बड़ी सूक्ष्मता से अध्ययन करने का अवसर मुझे तब प्राप्त हुआ जब मैं स्वयं 15 दिसम्बर 2020 को सिंधु बार्डर पर आंदोलन की धरातलीय स्थिति को अनुभव करने गई। यह दिल्ली–पंजाब को जोड़ने वाला प्रमुख मार्ग है तथा यह एक आठ–लेन मार्ग है जिसे कृषकों द्वारा 20 किलोमीटर की दूरी तक अवरोधित किया गया हुआ था। विरोध स्थल एक स्थिर स्थान पर लोगों की एक मंडली मात्र नहीं दिखाई पड़ रहा था क्योंकि यह एक राष्ट्रीय राजमार्ग पर है तो लोगों की आवाजाही भी निरंतर हो रही थी। वहां पर मुख्य आकर्षण वह मंच था जिस पर पूरे दिन कोई न कोई नेता पंजाबी भाषा में भाषण दिए जा रहे थे। वहीं दूसरी आर लोगों द्वारा मीडिया विरोधी नारे भी लगातार लग रहे थे। वहां पर दैनिक आवश्यकता की सभी सुविधाएँ उपलब्ध थी। भोजन के उचित 'लंगर' के साथ–साथ आवश्यक वस्तुओं जैसे मोजे, कंबल एवं दवाइयों का 'लंगर' भी चल रहा था। 'गुरु का लंगर' वहां सबसे प्रमुख लंगर था, जो प्रतिदिन दो से ढाई हजार लोगों को भोजन उपलब्ध करवा रहा था। इस के साथ–साथ अनेक छोटे–छोटे लंगर भी चल रहे थे। पूरे क्षेत्र में चाय, नाश्ता और दूध वितरित किया जा रहा था। यह एक भव्य दृश्य था जो एक छोटे से आत्मनिर्भर 'कुनबा' जैसा प्रतीत हो रहा था, जहाँ किसी

भी प्रकार की सुविधा एवं सत्कार में कमी नहीं देखी जा सकती थी। वहां उपस्थित कृषक बादाम, मूंगफली और पानी से आगुंतकों का सत्कार कर रहे थे। कृषकों द्वारा अपने टेक्टरों को रहने के स्थान के रूप में परिवर्तित कर दिया गया था। चार या पांच लोगों के समूह जगह–जगह पर धूप तापते हुए, हुक्के का आनंद लेते हुए एवं आंदोलन पर चर्चा करते हुए देखे जा सकते थे। यह दृश्य मंच के उस भाषण एवं नारों के शोर से परे होने वाली क्रियाकलापों का एक प्रथम वक्तव्य था, जो आंदोलन का एक अभिन्न अंग माना जा सकता है।

काविड–19 महामारी के अंतर्गत अध्यादेश द्वारा पारित किए गए तीन कृषि विधि/कानून को निरस्त करना ही इस आंदोलन का मुख्य ध्येय रहा है। यह तीन विधियाँ है– कृषक उत्पादन व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सुविधा) विधेयक, 2020, मूल्य आश्वासन और फार्म सेवा अधिनियम पर कृषक (सशक्तिकरण और संरक्षण) समझौता, और आवश्यक वस्तु (संशोधन) अधिनियम। विडंबना यह है कि सभी कृषकों को इन तीन अधिनियमों, जिन्हें उनके लिए पारित किया गया है के बारे में पूर्ण जानकारी ही नहीं है। उनकी समस्याएँ, वाद विषय वास्तविक एवं स्पष्ट है परन्तु प्रश्न यह उठता है कि क्या यह उन चिंताओं के साथ संरेखित होती है जिनका संबंध इन तीन अधिनियमों से संबंधित है।

आंदोलन स्थल पर प्रत्यक्ष रूप से कृषकों से हुए विचार–विमर्श से मेरा प्रथम अनुभव यह रहा कि कृषक मंडी व्यवस्था के खत्म होने से भयभीत है जो कृषि के व्यवसाय में कृषकों को प्रोत्साहित करने का कार्य करती है। पंजाब 1960 की हरित क्रांति का केंद्र रहा है जिसने इसे अनाज का भंडार के रूप में विकसित किया। जिसके पश्चात से मंडी व्यवस्था ही कुशलता से कार्य कर रही थी। ऐसे में उन्हें भय है कि यह नए कृषि अधिनियम मंडो की उपयोगिता का अंत कर देंगे। उनका मानना है यह विधियाँ व्यापारिक घरानों के लिए निर्मित हुई है जो प्रथम दो वर्ष तो फसलों के उचित मूल्य देंगे परन्तु उसके पश्चात् वह फसलों के मूल्य स्वयं से निर्धारित करेंगे। इसके परिणाम स्वरूप कृषक अपनी सौदेबाजी की शक्ति का खो देंगे तथा व्यापारिक घरानों का ही बाजार पर एकाधिकार स्थापित हो जायेगा। चूँकि आनाज के भंडारण पर भी कोई सीमा नहीं निर्धारित की गयी है तो ऐसे में व्यापारिक घराने अपने अनुसार मूल्यों का विनिमयन और दोहन कर सकेंगे। ऐसे में कृषक एक न्यूनतम समर्थन मूल्य की मांग को भी रखते है और यह मांग उनके पेप्सीको कंपनी के साथ के भूतपूर्व अनुभवों पर आधारित है। यह कंपनी आलू के चिप्स बनाने के लिए स्थापित की गयी जिसने प्रथम वर्ष में सभी प्रकार के आलू खरीद लिए तथा जिससे प्रेरित होकर सभी कृषकों द्वारा आलू की खेती की गयी। उसके पश्चात इस कंपनी द्वारा

आलू की गुणवत्ता के मापदंड निर्धारित कर दिए। जिसके परिणाम स्वरूप अनेक कृषकों की फसलें खराब हो गयी। कृषकों को इस बार भी भय है कि वह कही ऋण में न फंस जायें या अपनी भूमि से हाथ न धो बैठें। इन आधारभूत मांगों में एक पक्ष बिचौलियों (अरथिया) का भी है वह इस आंदोलन का भाग इसलिए है क्योंकि उनको भय है कि मंडी व्यवस्था के अंत होने से उनकी आय के स्रोत भी समाप्त हो जाएंगे। कृषकों द्वारा अढ़तिया को समर्थन इसलिए दिया जा रहा है क्योंकि उनके अनुसार वह अधिक सुविधाजनक है और वह उन से छोटे कर्ज/ऋण भी ले सकते है। बैंकों की जटिल प्रक्रिया के साथ–साथ व्यापारिक घरानों का समिल्लिन इसे अधिक दुविधा पूर्ण बना सकता है। बड़ी लागत की वजह से कृषकों को अधिकतर ऋण पर ही निर्भर रहना पड़ता है तथा इस प्रक्रिया में वह अपनी भूमि से ही हाथ धो बैठते है। यह समस्या छोटे कृषकों के मध्य अधिक रहती है। सभी कृषकों की समस्याएँ ऐसी ही मिली जुली है। सिंधु बार्डर पर मुख्यतः पंजाब के कृषक है परन्तु अन्य कृषकों की व्यथाओं ने उनकी मांगो एवं प्रदर्शन को मजबूत करने का कार्य ही किया है।

वहीं मैंने यू.पी गेट पर हो रहे धरना प्रदर्शन में अनुभव किया कि वहां मुख्यतः उत्तर प्रदेश एवं उतराखंड के कृषकों द्वारा भागीदारी ली जा रही है। यह उत्तर प्रदेश के कृषकों के साथ शुरू होता है और बाजपुर और उधम सिंह नगर से उत्तराखंड के कृषकों तक जाता है। यहाँ कृषकों से अधिक कृषक यूनियन एवं मीडिया की उपस्थिति देखने को मिल रही थी। सिंधु बॉर्डर की अपेक्षा यहाँ लोगों की चहल पहल कम थी। यहाँ कृषकों की समस्या मात्र कृषि अधिनियम को लेकर नहीं थी वरन अन्य विषयों पर भी थी। उनकी मुख्य समस्या उस मुआवज से है जो उन्हें कृषि से प्राप्त होती है। उनके अनुसार ऋण देने या कृषक क्रेडिट कार्ड जैसी योजनाओं की अपेक्षा सरकार को मुआवजे की रकम को बढ़ा देना चाहिए। इस ही कारण यहाँ कृषकों से अधिक कृषक नेता इस आन्दोलन में अधिक उपस्थित थे और वह कृषि अधिनियमों के बारे में अधिक जागृत भी थे। उत्तर प्रदेश एवम् उत्तराखंड के कृषक न्यूनतम समर्थन मूल्य के समर्थन में इसलिए अधिक दिखाई दिए क्योंकि पश्चिमी उत्तर प्रदेश में मेरठ, गाजियाबाद और बागपत में मंडी व्यवस्था का संचालन अधिक हो रहा है तथा एक सामान्य अवलोकन से यह निष्कर्ष निकल कर आता है कि जिन कृषकों का सीधा संपर्क मंडी व्यवस्था से संबंधित है वह इन कृषि अधिनियमों के लिए अधिक रोष प्रकट कर रहे है।

यह आंदोलन वास्तविकता में मिलीजुली आवाजों का एक मिश्रण है जहाँ प्राथमिक रूप से मंडी व्यवस्था को संरक्षित करने पर बल दिया जा रहा है, साथ ही न्यूनतम समर्थन मूल्य की मांग को

सुनिश्चित करना एवं व्यापारिक घरानों के नियंत्रण से मुक्ति का आश्वासन देना भी इसके वाद विषय रहे है। यह आंदोलन कृषकों के अस्तित्व से इसलिए सह सम्बन्धित हो गया है क्योंकि मंडी व्यवस्था के अंत को वह अपनी स्वायत्तता से स्पष्ट रूप से जोड़ कर देख रहे है।

इस समस्या का समाधान कृषकों की आय वृद्धि द्वारा ही सुनिश्चित किया जा सकता है। एक कृषक एकमात्र उपभोक्ता है जो थोक में बेचता है लेकिन खुदरा में खरीदता है। अतः वह न केवल निर्माता है, बल्कि उसी बाजार में उपभोक्ता भी है। ऐसे में वैश्वीकरण के परिणाम स्वरूप जीवनयापन के व्यय में तो भारी वृद्धि हुई है, लेकिन कृषक की आय आज भी स्थिर है। उत्तर प्रदेश के कृषकों की यह ही समस्या थी कि गन्ने के मूल्य के आने में एक वर्ष का समय लग जाता है ऐसे में उनके पास अपनी मूल आवश्यकताओं के लिए स्थानीय ऋण दाताओं से ऋण लेने के अलावा कोई भी विकल्प शेष नहीं रह जाता है।

छोटे कृषकों के पास धन की उपलब्धता उतनी ही रहती है जिस से वह अपना जीवन यापन ही कर सके। उर्वरक, बीज, पानी, बिजली की लागत में वृद्धि के साथ कृषि क्षेत्र में लगने वाली लागत में भी वृद्धि हुई है साथ ही बीस वर्ष की अवधि के पश्चात वाहनों के प्रयोग पर समय सीमा निर्धारित करने से समस्या को और अधिक बड़ा दिया गया है। एक छोटा कृषक अपने जीवनकाल के संसाधनों को बुनियादी ढांचे के निर्माण के लिए ही निवेश कर देता है। एक बड़े वाहन में निवेश करने लायक वित्त की उपलब्धि कृषकों के लिए समस्या निर्माण करने का कार्य करती है। कृषक ऐसी और अधिक योजनाओं जैसे– कृषक क्रेडिट कार्ड, ऋण माफी या फसल ऋण की मांग नहीं कर रहे हैं। वह उस व्यवसाय से एक सम्मानित आय की अपेक्षा रख रहे है जिसे वह पीढ़ियों से करते आएं है। वह अपनी उपज के लिए एक उचित मूल्य की अपेक्षा करते है जिससे उन्हें अन्य ऋण दाताओं पर निर्भर नहीं रहना पड़े। जिसे अमृत्य सेन की 'योग्यता उपागम' से समझा जा सकता है जो की 'स्वतंत्रता के रूप में विकास' की अवधारणा पर आधारित है जिससे प्रत्येक व्यक्ति को वैश्वीकृत समाज में अपनी क्षमता अनुसार जीवन यापन करने का अवसर प्राप्त हो सकें। व्यापारिक घरानों के साथ आयात–निर्यात पर डब्ल्यू. टी. ओ के नियमों को लागू करने वाले नव उदारवादी बाजारवादी सुधार सम्बन्धी नीतियों ने कृषक को तंग जगह पर खड़ा कर दिया है। आज कृषकों के मध्य व्यवस्था के प्रति विश्वास का अभाव देखा जा सकता है। वह व्यावसायिक घरानों से भय के कारण पुराने ऋण व्यवस्था पर अधिक विश्वास करते है। तीनों कृषि अधिनियमों से उनकी आशंका उन कथनों पर आधारित है, जो कथ्य के आधार पर फलदायी नहीं हैं।

कृषकों की आशंका सही है या नहीं, यह इस बात पर निर्भर करता है कि बाजार उनके पक्ष में कैसे चलता है। ऐसे में सरकार को सीधे कृषकों के साथ एक संचार लिंक स्थापित करना होगा, जो नेताओं और बिचौलियों से आगे निकल कर जाए। कृषक नीति निर्माण का हिस्सा बनना चाहते हैं न की ऐसी नीति का हिस्सा बनाना चाहते है जहाँ अन्य कोई उनकी शर्तों को निर्धारित करें। कृषि क्षेत्र की वृद्धि और यहां तक कि छोटे और सीमांत कृषक के समावेशी विकास के बीच संतुलन बनाए रखना सरकार की ही जिम्मेदारी होनी चाहिए। नीतियों को 'अंतिम व्यक्ति' की स्थिति में सुधार लाने पर ध्यान केंद्रित होना चाहिए। किसी भी कृषक को विकास की प्रक्रिया में हाशिए पर उदास और निराश महसूस नहीं कराना चाहिए। सरकार को कृषकों का विश्वास जीतना होगा, और इसके विपरीत कृषक को सरकार में विश्वास करना सीखना होगा। यह विरोध दोनों पक्षों के बीच एक नए संबंध निर्माण की एक उत्पत्ति कर सकता है। विरोध इस बात पर आधारित है कि परिणाम क्या होंग और क्या परिणाम नहीं होंगे। वास्तविकता में जो नहीं हुआ है उस पर अभी भी अंकुश लगाया जा सकता है।

♦♦♦♦♦

सन्दर्भ सूची

[i] *'Evaluation study of efficacy of Minimum Support Price on farmers' PEO REPORT ON 231 NITI Aayog; Development Monitoring and Evaluation Office Government of India, New Delhi. (2016)*

Gulati, A. (2020, December 7). Punjab needs a package to help it diversify output, overcome MSP track. *The Indian Express*. Retrieved from https://indianexpress.com/article/opinion/columns/punjab-farmers-protests-farm-laws-7094357/

Pandey, K. (2019) '6 reasons why India has failed to solve the riddle of agricultural marketing' in *Down to Earth*. Retrieved from https://www.downtoearth.org.in/news/agriculture/6-reasons-why-india-has-failed-to-solve-the-riddle-of-agriculture-marketing-62712

Ruskin, J. (1862). *Unto This Last: Four Essays on Principle of Political Economy*. London; Smith, Elder. Paperback.

Sen, A (1999*). Development as Freedom.* New York; Oxford University Press.

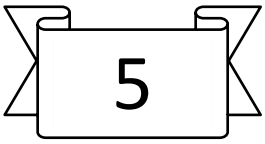

कृषि कानून बनाम केंद्र सरकार आर सर्वोच्च न्यायालय

चित्रा राजौरा

शोधार्थी, रूस एवं मध्य–एशिया अध्ययन केंद्र, जवाहरलाल नेहरु विश्वविद्यालय

भारत की पहचान उसकी गांवो एवं कृषि प्रधान व्यवस्था से की जाती है इसलिए गाँधी जी ने ग्राम स्वराज व रामराज की बात कही। भारत की कुल जनसंख्या का लगभग 70 प्रतिशत भाग गांव में ही निवास करता है और इन गांवो की की जनसंख्या कृषि कार्यो में संलग्न है। इसी आधार से भारतीय अर्थव्यवस्था में संख्यात्मक भागीदारी के हिसाब से जिस वर्ग को सबसे अधिक मान्यता और महत्व मिलाना चाहिए उस वर्ग की उपेक्षा से राष्ट्र की प्रगति के अवसर क्षीण पड़े रहे है। मान्यता तो यह रही है की भारत की समृद्धि का रास्ता ग्रामो और खेतो से होकर गुजरता है, लेकिन समृद्धि गाँव से दूर रह जाती है और खेतों तक पहुँच नहीं पाती है। इसका मुख्य कारण भारत में कृषि व्यवसाय उद्योग घोषित नहीं है। इसी आधार, भारत सरकार अपने कृषि क्षेत्र को बड़े पैमाने तक पहुचने के लिए पुरजोर कोशिश करता आ रहा है। भारतीय कृषि क्षेत्र को मजबूत आधार प्रदान करने के लिए सरकार कृषि क्षेत्र में अनेक सुधार– कानूनों की घोषणा करती आई है। जिसका जीता–जगता उद्धरण 26–27, नवम्बर, 2020 (अभी तक) से चल रहा कृषि कानून विरोध–प्रदर्शन से होता है। यह स्पष्ट है की उपयुक्त परिस्थितियों में कृषको और कृषि की रक्षा के लिए केंद्र सरकार द्वारा कृषि हित में कानून को संसद द्वारा अनुमोदित किया गया था।

विपरीत, पंजाब और हरियाणा तथा अन्य राज्य कृषको द्वारा कानून का लगातार विरोध किया जा रहा है। इस पत्र में मुख्य जोर कृषि–कानून विरोध प्रदर्शन पर सर्वोच्च न्यायालय को प्रतिक्रिया का उल्लेख किया गया है प्रश्न यह उत्पन्न होता है की यह कृषि–कानून विरोध किस–स्तर पर आकर रुकेगा? और ऐसे कौन–सी परिस्तिथिया है जो सर्वोच्च न्यायालय को अपने निर्णय लेने में दुर्लभ बना रही है जिससे निर्णय लेने में बाधा और देरी हो रही है? साथ ही, इस पत्र में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समय–समय पर दी गयी दलीलों का भी पूर्णरूप से वर्णन किया गया है। अंतः यह वाद–विवाद का प्रश्न बना हुआ है की कृषि–कानून बिल को वापिस लिया जाएगा या

नहीं? या इस बिल में माध्यम–रास्ता अपना कर इसमें छोटे–मोटे सुधार करकें लागूं किया जाएगा?

भारत लोकतान्त्रिक देश है जिसके अंतर्गत नागरिको को स्वतंत्रता का अधिकार प्रदान किया है जिसमे शांतिपूर्ण विरोध–प्रदर्शन और बिना हथियारों के शांतिपूर्ण ढंग से जुटने का अधिकार (अनुछेद 19–1 (ए)) प्रदान किया है। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय को भी यह अधिकार प्रदान किया है की वे इस अधिकार को देश–हित को ध्यान में रख कर बाधित कर सकता है। दूसरा, सर्वोच्च न्यायालय केंद्र–राज्य द्वारा गठित कानूनों को रद्द कर सकती है अपवाद, यदि संवैधानिकता का प्रश्न उत्पन्न होता है। इस प्रकार, कृषक आन्दोलन में भी सर्वोच्च न्यायालय द्वारा याचिका दायर की गयी थी, जिसमे प्रदर्शनकारियों को दिल्ली के जन्तर–मंतर में कोविड–19 महामारी के दिशादिर्नेश को अपनाते हुए प्रवेश करने की अनुमति दी गयी थी। साथ ही, पुलिस प्रशासन को यह सिफारिश की कि "शांतिपूर्ण घरना–प्रदर्शन, किसी भी नागरिक का मौलिक अधिकार है। ये किसी भी तरह से उनसे छिना नहीं जा सकता है।" सर्वोच्च न्यायालय को नागरिको के मौलिक अधिकारों का संरक्षक माना जाता है। परिणामस्वरूप, कृषक प्रदर्शनकारी को अपने देश की एकता और अखंडता के मध्यनजर यह अधिकार प्रदान किया गया है।

कृषक आन्दोलन का स्वरूप

प्रसिद्ध कृषक नेता महेंद्र सिंह टिकैत (1989) के शब्दों में "कृषक स्वाभिमान से जीना चाहते है और अगर उसके स्वाभिमान को ठेस पहुचाई गयी तो कृषक अपनी जान की कुर्बानी देने के लिए भी तैयार है।" भारतीय राष्ट्रिय आन्दोलन तथा स्वतन्त्रतापूर्व भारत के कृषक आन्दोलन सदैव शोषण और उत्पीडन से मुक्ति हेतु तथा समायिक सुविधाओ की मांग को लेकर होते रहे है। आजादी के पहले पुरे देश के कृषको की आर्थिक स्थिति नितांत जर्जर और भयावक थी। आजादी के बाद कुछ राज्यों में जमींदारी उन्मूलन कानून बने और उन कानूनों के प्रभावी होने के कारण आर्थिक स्थिति में तुलनात्मक बदलाव आया है। लेकिन यह बदलाव नगर के भौतिकवादी पर्यावरण और साधन सम्पन्नता में फूलते हुए लोगो की तुलना में आज भी नगण्य है। बावजूद, आज की कृषको की स्थिति पहले की तुलना में काफी आधुनिकता और वैश्विकरण से प्रभावित है। राष्ट्रिय संदर्भो में व्यक्ति और संस्था दोनों ही अपना महत्व रखते है जब कभी आन्दोलनों की प्रेरणा से वशीभूत होकर कोई व्यक्ति अपनी गतिविधियों को पौनी– धार की तरह तेज करना चाहता है तब उसे छोटे या बड़े रूप में किसी न किसी संगठन या संस्था की अपरिहार्यता का अनुभव होता है। भारतीय कृषक यूनियन का इतिहास भी ऐसी ही परिस्थितियों

से जुड़ा है। लेकिन, समकालीन समय में आन्दोलन– माध्यम में अजीम–असमान का अंतर देखा जा सकता है। चाहे देश कोविड–19 जैसी महामारी का सामना क्यों ना कर रहा हो। इस दौरान, सोशल मीडिया (फेसबुक, ट्विटर, व्हट्सएप और ऑनलाइन मीटिंग एप आदि) और गैर–सरकारी संगठनो की अहम भूमिका रही है। जैसे कृषि संगठन और अखिल भारतीय कृषक संघर्ष समन्वय समिति (AIKSCC) जैसे बड़े कृषि निकाय और कृषकों के कुछ वर्ग आदि का सहयोग है। वही, राजनितिक दलों में आप पार्टी, कांग्रेस पार्टी, वाम दलों, आरएसपी, डीएमके, आरजेडी, एसपी, तृणमूल कांग्रेस, तेलंगाना राष्ट्र समिति और दिल्ली में सत्तारूढ़ आम आदमी पार्टी भी कृषकों के समर्थन में आ गईं हैं। इस प्रकार, कृषक आन्दोलन का स्वरूप काफी व्यापक रूप से विकसित हो रहा है।

सरोकार मांगो से है राजनीती से नहीं है

कृषि कानून के विरोध में 26–27, नवम्बर, 2019 को सामाजिक कार्यकता सावित्री देवी के नेतृत्व में 155 कृषको का समूह के साथ कृषक नेता मुकेश पाठक के नेतृत्व में भी कृषक दिल्ली में आये। और धीरे–धीरे इस आन्दोलन में लगभग 200,000– 30,000 लोग जुड़ चुके है (इंडिया टुडे न्यूज पेपर)। यह आन्दोलन विशेषकर केंद्र सरकार द्वारा लागू किये गये तीन बिल (कृषक उपज व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सरलीकरण) विधेयक, 2020, कृषक (सशक्तिकरण व संरक्षण) कीमत आश्वासन और कृषि सेवा पर करार विधेयक, 2020, और सेवा विधेयक और आवश्यक वस्तुएं (संशोधन) विधेयक) के खिलाफ है। कृषको द्वारा अपनी मांगो को सरकार के समक्ष रखा है। जिसमे वे एक विशेष सत्र बुलाकर इन तीनो कानूनों को निरस्त करवाना चाहते है। तथा कृषक संघ कृषि उत्पादों की एमएसपी से कम मूल्य पर खरीद को दंडनीय अपराध के दायरे में रखने की मांग की जा रही है। विपरीत, कृषक और केंद्र सरकार के बीच इसके समाधान के लिए आठ बैठक बुलाई जा चुकी है जिसका कोई नतीजा नहीं निकल पाया है।

इस मद्देनजर, भारत सरकार द्वारा पिछले 5 वर्षो में नीतियों और प्राथमिकता में बदलाव लाने के लिए प्रस्तावित कानून की घोषणाओ में कृषकों को अपने उत्पाद नोटिफाइड ऐग्रिकल्चर प्रोड्यूस मार्केटिंग कमेटी (APMC) यानी तय मंडियों से बाहर बेचने की छूट दी है। दूसरा, कृषक अनुबंध विधेयक 2020 (इस प्रस्तावित कानून के तहत कृषकों को उनके होने वाले कृषि उत्पादों को पहले से तय दाम पर बेचने के लिये कृषि व्यवसायी फर्मों, प्रोसेसर, थोक विक्रेताओं, निर्यातकों या बड़े खुदरा विक्रेताओं के साथ अनुबंध करने का अधिकार दिया है)। तीसरा, एसेंशियल कमोडिटी बिल 2020 इसका उद्देश्य कृषि क्षेत्र में निजी निवेश/एफडीआई को

आकर्षित करने के साथ–साथ मूल्य स्थिरता लाना है। निष्कर्षतः कहा जा सकता है भारत सरकार समय–समय पर कृषि क्षेत्र और कृषक मजदूर के लिए अनके रणनीतिक नीतियों–योजनाओ का गठन उनकी आवश्कताओं के अनुसार करती आई है।

4 दिसम्बर 2020 को हुए आठवी दौर की बैठक में कृषि कानून में 8 मुद्दों पर संशोधन के साथ विचार–विमर्श किया गया था। लेकिन कृषक नेताओ द्वारा इस सब बदलाव को नामंजूरी दी गयी। और इसका समर्थन कुल 24 राजनीतिक पार्टी और कृषक संगठनो द्वारा किया गया और यह कहा गया की "मोदी सरकार ने कृषि कानूनों को वापस नहीं लिया तो आने वाले वक्त में उन्हें उनकी उपज के औने दृ पौने दाम नही मिल पाएगे और खेती की लगत भी नहीं निकल पाएगी।" एक तरफ अकाली दल के हरसिमरत कौर ने सरकार से इस्तीफा दे दिया। वही दूसरी तरफ, कृषि एवं कृषक कल्याण मंत्री नरेन्द्र सिंह तोमर ने कृषि उपज एवं कीमत आश्वासन संबन्धित विधेयको को "परिवर्तनकारी" बताया। तृणमूल कांग्रेस के कल्याण बनर्जी ने विधेयक का विरोध करते हुए कहा कि "यह कृषक विरोधी है। इसके कारण गरीब और कम पढ़े–लिखे कृषकों को मजबूत पक्षों की शर्तों को मानने को विवश होना पड़ेगा। उन्होंने आरोप लगाया कि इससे जमाखोरी, कालाबाजारी को बढ़ावा मिलेगा तथा उद्योगपतियों एवं बिचौलियों को फायदा होगा। राज्य के पास अधिकार नहीं रह जायेगा।" भारतीय कृषक संघ के अखिल भारतीय ऑर्गनाइजिंग सेक्रेटरी दिनेश कुलकर्णी ने कहा कि "हम भी चाहते हैं कि कृषकों को कॉम्पिटिटिव मार्केट मिले, इस लिहाज से बिल ठीक है लेकिन इसमें कुछ सुधार होने की जरूरत है। अभी कृषकों को एमएसपी का भरोसा नहीं मिल रहा है, जो मिलना चाहिए।" लेकिन बीजेपी सरकार द्वारा इस बिल को कृषको के हित में बताया गया है। प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी के मार्गदर्शन में और कृषि मंत्री श्री तोमर के दिशानिर्देश में आज आत्मनिर्भर कृषि की मजबूत नींव रख दी गई है। दूसरी ओर मोदी सरकार इन अध्यादेशों को 'ऐतिहासिक कृषि सुधार' का नाम दे रही है। उसका कहना है कि वे कृषि उपजों की बिक्री के लिए एक वैकल्पिक व्यवस्था बना रहे हैं। इन सब दोनों पक्षों की दलीलों के बाद यह कहा जा सकता है की कृषक अपने मांगो को पूर्ण करने में अडिग है तो वही दूसरी तरफ केंद्र सरकार अपने राजनितिक दवपेंच को अमिलिजामा पहनाने में लगी पड़ी है। इस बीच, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दोनों के बीच एक माध्यम रास्ता निकलने में पुरजोर प्रयास कर रही है ताकि चेक–बैलेंस की व्यवस्था स्थापित की जा सके।

सर्वोच्च न्यायालय की भूमिका

भारत में सर्वोच्च न्यायालय को न्यायिक समीक्षा की शक्ति प्रदान की गयी है जिसका अर्थ है की सर्वोच्च न्यायालय केंद्र दृराज्य द्वारा पारित किये गये कानून की संवैधानिकता की जाँच कर सकता है।अतरू सर्वोच्च न्यायालय द्वारा उस कानून को अवैध घोषित किया सकता है सरकार उन्हें लागू नही कर सकती है। इस आधार पर, यह सर्वोच्च न्यायालय की स्वतंत्र रूप से अपनी शक्तियों का प्रयोग करने का अधिकार भारतीय संविधान में दिया गया है। इसी प्रकार, सर्वोच्च न्यायालय द्वारा अनेक विवादों का फैसला लिया गया है जो इतिहास में एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है। जिससे यह साबित हो पाया है की सर्वोच्च न्यायालय संसद से ऊपर है। जैसय 1967 से 1973 तक, तब की सरकार ने योजनाबद्ध तरीके से संसद को मौलिक अधिकारों समेत संविधान के किसी भी भाग में संशोधन करने या उसे कम करने की अबाध शक्तियां प्रदान करने की कोशिश की और संविधान का 'मूलभूत ढांचा' (बेसिक स्ट्रक्चर) को एक अहम स्थान दिया गया जिसको आज भी अमल में लाया जा रहा है। तदोपरान्त, 2014 का सर्वोच्च न्यायालय के जजमेंट में कोर्ट कानून पर रोक लगाने पर आपत्ति लगायी थी यदि कानून बिना अख्तियार के हो या मौलिक अधिकार का उल्लघन करता हो, लेकिन अयोध्या विवाद 2019 को सरकार के पक्ष में निर्णय लिया था। निष्कषर्रू सर्वोच्च न्यायालय द्वारा समय दृसमय पर अपनी शक्तियों का उपयोग परिस्थितियों के अनुसार किया है।

वर्तमान में चल रहे कृषि बिल विवाद (कृषक संगठन बनाम केंद्र सरकार) में सर्वोच्च न्यायालय द्वारा इस बिल की संवैधानिकता की जाँच की मांग की गयी है। केन्द्रीय कृषि मंत्री नरेन्द्र सिंह तोमर के शब्दों में "संसद हमारे लोकतंत्र में कानून बनाती है। लेकिन सर्वोच्च न्यायालय के पास इसे जांचने का पूरा अधिकार है। सरकार जो भी फैसला सुनाएगी उसे स्वीकार करेगी।" इसी प्रकार, 11 जनवरी 2021 की सुनवाई में विवादास्पद कानूनों के कार्यन्वयन को रोक लगा दी गयी। तथा भारत के पूर्व मुख्य– न्यायाधीश की अध्यक्षता में एक स्वतंत्रता समिति बनाने का प्रस्ताव रखा है। जो प्रदर्शनकारी कृषको और केंद्र सरकार के बीच गातिरोध का समाधान निकाला जा सके। इस दौरान, न्यायालय द्वारा केंद्र सरकार की आलोचना भारत के मुख्य न्यायाधीश (CJI) शरद ए. बोबड़े की अगुवाई वाली तीन न्यायधीशो वाली बेंच ने की और कृषको के विरोध प्रदर्शन में केंद्र सरकार के साथ "विफल वार्ता"और "विद्रोह को तेज करने" सहित "निराशाजनक" प्रतिक्रिया को रेखांकित किया। अदालत ने केंद्र द्वारा पारित किये गये कानून को "बिना पयार्प्त परामर्श वाला" बताया जिसके कारण कृषको द्वारा हड़ताले और

प्रदर्शन शुरू किया गया है। मुख्य न्यायाधीश ने कहा कि "गठित की गई समिति कोई आदेश पारित नहीं करेगी और न ही किसी को दंड देगी, बल्कि वह अपनी रिपोर्ट न्यायालय को प्रस्तुत करगी। उन्होंने कहा कि इस मामले में समिति न्यायिक प्रक्रिया का एक हिस्सा है।" साथ ही, केंद्र द्वारा हड़तालो को शांत करने और उचित हल निकालने के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाये गये है। कृषक दृकेंद्र के बीच तनाव को तोड़ने और वार्ता के लिए उचित वातावरण का बनाने का प्रयास किया गया है। अतः सर्वोच्च न्यायालय के इस निर्णय को शरद ए बोबडे द्वारा न्यायालय को "संवैधानिक न्यायालय" की पहचना बताया। बावजूद इसके, सर्वोच्च न्यायालय के इस फैसले को कृषको ने असहमति दिखाई गयी। कृषक यूनियन के नेता बलबीर सिंह राजेवाल ने कहा की "हम ऐसी किसी समिति के समक्ष उपस्थित नहीं होगें। हमारा आंदोलन हमेशा की तरह आगे बढ़ेगा।" कृषक नेता राकेश टिकैत ने कहा कि "कृषकों की मांग कानून को रद्द करने व न्यूनतम समर्थन मूल्य को कानून बनाने की है। जब तक यह मांग पूरी नहीं होती तब तक आंदोलन जारी रहेगा। माननीय सर्वोच्च न्यायालय के आदेश का परीक्षण कर कल संयुक्त मोर्चा आगे की रणनीति की घोषणा करेगा।"

अतः यह कहा जा सकता है कृषक संगठन–केंद्र सरकार विवाद में सर्वोच्च न्यायालय का हस्तक्षेप से एक समिति गठन करने का निर्णय लिया गया है। ताकि दोनों के बीच कानूनों के विवादित मुद्दों को लेकर वार्ता की जा सकती है और उचित समाधान तक पहुचने में मदद मिल सके। तथा यह कहे पाना कठिन है की कृषक संगठन द्वारा उठाई गयी अपनी मांगो को पूर्ण करने में समिति द्वारा प्रदान की जाने वाली सिफारिशो को अमल में लाया जा पायगा या नहीं? या फिर, केंद्र सरकार द्वारा समिति के सुझावों को कानूनों में सम्मलित किया किया जा सकेगा या नहीं? तथा अभी किसी निष्कर्ष पर आना बहुत मुश्किल है। क्योकि यह विवाद सर्वोच्च न्यायालय के अंतिम निर्णय पर निर्भर करता है।

♦♦♦♦♦

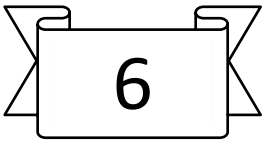

कृषक आन्दोलन का डिजिटलीकरणः सड़क से सोशल मीडिया तक

सुमन साहू

स्नातकोत्तर विद्यार्थी, राजनीति विज्ञान विभाग, रामजस महाविद्यालय, दिल्ली विश्वविद्यालय

2020 का कृषक आन्दोलन सिर्फ सिन्धु और टिकरी बॉर्डर की सड़कों पर ही नहीं बल्कि ट्विटर के हैशटैग और फेसबुक पेज के लाइव से भी संचालित हो रहा है। ट्विटर और फेसबुक के हैंडलों के जरिये सोशल मीडिया पर अपनी उपस्थिति दर्ज कराने वाला यह कृषक आन्दोलन पूर्व के कृषक आन्दोलनों से अलग एवं नए स्वरुप का है। उत्तर भारत की कड़कड़ाती ठंड में पिछले दो माह से देश के कृषक दिल्ली के आस पास सीमावर्ती क्षेत्रों में धरने पर हैं। 60 से अधिक कृषकों की इस बीच विभिन्न कारणों से मौत भी हो चुकी है, पर वहाँ मौजूद हर कृषक के हौसले अभी भी अडिग हैं। सितम्बर महीने में केंद्र सरकार द्वारा संसद में पास किये गए तीन कृषि कानूनों के विरुद्ध ही कृषक (मुख्यतः पंजाब एवं हरियाणा क्षेत्र के) मोर्चे पर है। लेकिन इस पूरे आन्दोलन की सबसे खास बात इसकी सोशल मीडिया के विभिन्न प्लेटफार्मों पर मौजूदगी रही। कृषकों द्वारा इस आन्दोलन की पहुँच को विस्तार करने, आन्दोलन की जानकारियों को साझा करने, आन्दोलन से जुड़े झूठे प्रोपगेंडा और मिथ्य बातों का खंडन करने के लिए सोशल मीडिया के ये प्लेटफॉर्म कृषकों का सबसे उपयोगी हथियार बने हुए हैं।

दिल्ली की सीमाओं पर जारी यह आन्दोलन 70 और 80 के दशक के नव सामाजिक आन्दोलन की कई विशेषताओं को शामिल किये हुए है। परन्तु सोशल मीडिया के प्रयोग ने इसकी प्रकृति को एक नया रूप दिया है। जैक गोल्डस्टोन यह मत देते हैं कि सामाजिक आन्दोलन मुख्यधारा की आम राजनीति का ही हिस्सा होते हैं। भारत के मामले में यह दशकों से सिद्ध होता आया है। सामाजिक आन्दोलनों ने भारत की मुख्य राजनीति को प्रभावित भी किया और नागरिक समाज स्वरूप भी दिया। राजनीति विशेषज्ञ रजनी कोठारी कहते हैं कि 80 के दशक में उदित हुए नव सामाजिक आन्दोलनों ने भारत के लोकतंत्र को अधिक सहभागी एवं विकेंद्रीकृत बनाने का कार्य किया जिससे आधारभूत मुद्दे मुख्य राजनीतिक क्रियाशीलता का हिस्सा बने।

भारत में 21वीं शताब्दी के नव सामाजिक आन्दोलन भी मुद्दे आधारित और अस्मिता आधारित रहे जिन्होंने समय–समय पर राष्ट्रीय और राज्य राजनीति को प्रभावित किया। लेकिन वर्तमान का कृषक आन्दोलन अपने आप में विशिष्ट है, और सोशल मीडिया की भूमिका इसे अभी तक हुए अन्य आन्दोलनों से अलग भी बना रही है।

सामाजिक आन्दोलन एवं सोशल मीडियाः एक संबंध

21वीं सदी में जहाँ हर पल वैज्ञानिक तकनीक नई खोजों के साथ खुद को और बेहतर बनाने में लगी हुई है, ऐसे में सूचना एवं प्रौद्योगिकी के नए एवं बेहतर स्वरूप इंसानी क्रियाकलापों के हर आयाम पर अपना प्रभाव डाल रहे हैं। इसी के तहत विश्व के अलग–अलग क्षेत्रों में विभिन्न नागरिक समाज द्वारा चलाए गए सामाजिक आंदोलनों पर भी सूचना एवं प्रौद्योगिकी की इन नई तकनीकों का प्रभाव पड़ा और आन्दोलनों के संगठन, कार्य व्यवहार, और विस्तार में सुधार आया। वर्तमान कृषक आन्दोलन के अलावा पूर्व में कई आन्दोलनों में सोशल मीडिया का प्रयोग अलग अलग उद्देश्य से होता रहा है परन्तु यह कुछ पहलुओं पर उन प्रयोगों से भिन्न है। 2011 के ओक्यूपाई वॉल स्ट्रीट आन्दोलन में जहाँ पहली बार एक ब्लॉग लेख और इंटरनेट वीडियो के माध्यम से आन्दोलन में जान फूंकी गई तो वहीँ भारत में भी 2011 के लोकपाल आन्दोलन एवं 2012 के निर्भया आन्दोलन में सोशल मीडिया ने आन्दोलन के आह्वान, संगठित होने और जेंडर जैसे संवेदनशील मुद्दों पर भी आम नागरिकों तक जानकारी पहुंचाने में अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

सोशल मीडिया एक ऐसा मंच उपलब्ध कराता है जिसके जरिए एक ही बार में एक साथ लाखों, करोड़ों की संख्या में लोगों तक अपनी बात पहुंचाई जा सकती है। तस्वीरों, लेखों, वीडियो, पोस्टरों, ऐनिमेशन, आदि का प्रयोग करके प्रभावी रूप से अपनी बात को रखा जा सकता है। किसी भी समाजिक आन्दोलन में ये सभी उपकरण बेहद उपयोगी साबित होते हैं, क्योंकि इनसे आन्दोलन की गंभीरता, उसके विस्तार और समाहिकरण की क्षमता को बढ़ाया जा सकता है। आज सोशल मीडिया पर असंख्य ऐप, प्लेटफॉर्म उपलब्ध हैं जहाँ सूचनाओं का प्रसार और सम्प्रेषण बहुत अधिक सरल तरीके से हो सकता है। परन्तु इस सरलता के साथ कुछ समस्याएँ भी सामने आई हैं जिसका असर वर्तमान आन्दोलन पर देखा जा सकता है।

कृषकों का मत है कि हाल के कृषि कानून सीधे व्यापार की प्रक्रिया में उन्हें बड़ी कंपनियों के सामने कमजोर बना देंगे, भविष्य में मंडियों का खात्मा हो जाएगा और कई स्थानों में मिडलमैन

की भूमिका खत्म होने से उन्हें नुक्सान हो सकता है। इसके साथ ही कृषक सरकार द्वारा एक निश्चित न्यूनतम समर्थन मूल्य को तय करने की मांग भी कर रहे हैं। इन्हीं उद्देश्यों को लेकर कृषक सरकार द्वारा लाए तीनों कृषि कानूनों को वापस लेने की मांग कर रहे हैं तो वहीँ सरकार इन कानूनों को भारतीय कृषि व्यवस्था के कायापलट का एक जरिया मान रही है। इन मांगों को लेकर शुरू हुआ यह यह कृषक आन्दोलन नवम्बर–दिसंबर माह में अधिक तेज और सबल हुआ जब कृषकों ने दिल्ली की ओर कूच की और सिन्धु एवं टिकरी बॉर्डरों पर अपना प्रदर्शन जमाया। शुरुआत में केवल पंजाब के कृषकों द्वारा प्रारंभ हुए इस आन्दोलन में आगे चलकर हरियाणा, महाराष्ट्र, मध्य प्रदेश एवं अन्य प्रदेशों के कृषकों ने भी हिस्सा लेना शुरू किया।

अब अपनी इन मांगों के साथ आये कृषक प्रदर्शनकारियों का अभी तक का स्पष्ट मत यह रहा है कि मुख्यधारा का मीडिया उनके पक्ष को सही तरीके से दिखाने में असफल रहा है। कृषकों का मानना था कि अधिकतर मीडिया चौनल और समाचार पत्र अपने द्वारा बनाये गए एक नैरेटिव और पूर्वधारणाओं का ही पालन करते हैं और कृषकों की बातों को निष्पक्ष ढंग से दिखाने में कारगार नहीं हैं। ऐसे में कृषकों के पास अपनी बातों को रखने और खुद का प्रतिनिधित्व करने का एकमात्र रास्ता सोशल मीडिया ही बचा जिसके सहारे इस आन्दोलन की सच्चाइयों को दुनिया के सामने रखा गया। कृषक आन्दोलन में सोशल मीडिया ने तीन स्तरों पर अपनी भूमिका निभाई–

सम्प्रषण के उपकरण के रूप में

आन्दोलन की शुरुआत से ही कृषकों को अलग–अलग तमगे जैसे खालिस्तानी या देशद्रोही देकर इस आन्दोलन की नैतिकता पर सवाल उठाने के प्रयास किये गए। इसके साथ ही मीडिया का एक बड़ा हिस्सा एक पक्ष से ही जानकारियों को प्रदर्शित करने में लगा हुआ था। इस स्थिति में कृषकों ने अपने पक्ष को सामने रखने के लिए ट्विटर, फेसबुक, इन्स्टाग्राम, स्नैपचौट, टेलीग्राम जैसे सोशल मीडिया प्लेटफार्मों का सहारा लिया। आन्दोलन में शामिल अलग अलग कृषक संगठनों के सोशल मीडिया हैंडलों ने आन्दोलन की जानकारियों को अपने पेजों के माध्यम से साझा किया, आन्दोलन का नेतृत्व कर रहे कृषक नेताओं की प्रेस कांफ्रेंस, वीडियोज, साक्षात्कारों को लोगो के सामन पेश किया जा रहा है। फेसबुक लाइव के जरिए पल–पल की खबरें अपडेट की जाती हैं। इसके साथ ही एक नए विशेष मंच 'कृषक एकता मोर्चा' को भी शुरू किया गया जिससे एक स्थान पर प्रदर्शन से जुडी सभी जानकारियों का सम्प्रेषण सुलभ हो सके। हालांकि 20 दिसम्बर को एक प्रेस लाइव के दौरान ही फेसबुक कंपनी ने कृषक एकता मोर्चा के पेज को

अस्थायी तौर पर फेसबुक और इन्स्टाग्राम से हटा दिया था। इसके विरोध में कंपनी को कड़ी प्रतिक्रिया झेलनी पड़ी और कुछ ही घंटो के भीतर 'शेम ऑन फेसबुक' के हैशटैग सोशल मीडिया पर ट्रेंड करने लगे। 24 घंटों के भीतर ही फेसबुक ने कृषक एकता मोर्चा के पेजों को वापस चालू किया और इस असुविधा के लिए माफी भी मांगी। इसके साथ ही विभिन्न सोशल मीडिया पेजों के जरिए आन्दोलन के लिए सहयोग जुटाने के साथ साथ प्रदर्शनकारियों के लिए आवश्यक वस्तुओं क इंतजाम की भी पहल जारी है। ट्विटर पर अपील के माध्यम से बड़ी संख्या में लोगों और विभिन्न संगठनों ने स्वास्थ्य संबंधी आवश्यक वस्तुएं, महिला आन्दोलनकारियों के लिए सैनेटरी नैपकिन जैसी जरूरत की चीजे आन्दोलन स्थल पर उपलब्ध कराई। इसके अलावा मीडिया और सोशल मीडिया में चल रहे विरोधी प्रोपेगेंडा और झूठी जानकारियों के जवाब में अपने हिस्से के सच को प्रस्तुत करने का काम भी आन्दोलन से संबंधित ये हैंडल बखूबी कर रहे हैं।

संपर्क के साधन के रूप में

हम जानते हैं कि सूचना एवं प्रौद्योगिकी की उपलब्धियों का मुख्य लक्ष्य संपर्क एवं संचार के तरीकों को बेहतर करना रहा है। सोशल मीडिया ने भी इस कृषक आन्दोलन में संपर्क की स्थिति को सुधारने में सहायक भूमिका निभाई। करीबन 40 कृषक संगठनों की इसमें सम्मिलितता को देखने से इस आन्दोलन के बड़े स्तर की अनुभूति होती है। कई किलोमीटर तक फैले इस आन्दोलन में आवश्यक सूचनाओं के प्रसार और आन्दोलन की प्रगति को जानने के लिए सोशल मीडिया पर बनाये गए हैंडल उपयोगी साबित हो रहे हैं। इसके साथ ही प्रदर्शनकारियों के परिवारजनों, उनके गाँव के सह नागरिकों, देश–विदेश के विभिन्न क्षेत्रां में रह रहे लोगों, विशेषकर आन्दोलन में अपना सहयोग देने के इच्छुक लोगों से सीधा संपर्क इन हैंडलों और पेजों के माध्यम से संभव हो पा रहा है। कई पंजाबी संगीत और फिल्मी कलाकारों ने भी ट्विटर और इन्स्टाग्राम पर आन्दोलन के लिए अपना सहयोग जाहिर किया, उनमें से कई प्रदर्शन स्थल पर भी पहुंचे। इसके साथ ही आन्दोलनकारी कृषकों के बच्चों और पंजाब–हरियाणा के युवाओं ने अपनी तरफ से भी गानों और विडियोज के जरिये गाँव के बड़े बुजुर्गों द्वारा चलाये जा रहे इस संघर्ष का सहयोग किया।

अतः यह कहा जा सकता है कि सोशल मीडिया ने आन्दोलनकारियों को अपनी अगली पीढ़ी, दूसरे क्षेत्रों के सहयोगकर्ताओं, परिवारजनों और अन्य शुभचिंतकों से जुड़ने और संपर्क स्थापित करने का प्रत्यक्ष मंच उपलब्ध कराया।

स्टटेजी के लिए उपकरण के रूप में

किसी भी आन्दोलन की सफलता उसके प्रभाव पर निर्भर करती है। एक आन्दोलन अपने आप में ही एक प्रक्रिया होता है, कभी इस प्रक्रिया की अवधि छोटी होती तो कभी लम्बी। परन्तु इसका भी अपना एक प्रारम्भ, मध्य और अंत होता है। और आन्दोलन की इस प्रक्रिया का क्या स्वरूप होगा ये उसकी स्ट्रेटेजी या कहे रणनीति तय करती है। अभी कृषक आन्दोलन अपने मध्य में है, इसका अंत कब और कैसे होगा यह हमें नहीं मालूम। सरकार के साथ वार्ताओं का दौर जारी है और सर्वोच्च न्यायालय ने भी दोनों पक्षों की बातचीत की सहूलियत के लिए कमेटी का गठन किया है। परन्तु इस आन्दोलन की स्ट्रेटेजी को रूप देकर उसके अनुसार आगे बढ़ने में सोशल मीडिया की महत्वपूर्ण भूमिका रही। कृषकों और कृषक नेताओं द्वारा प्रदर्शनकारियों को कब और कहाँ संगठित होना है, सरकार के साथ वार्ता कब होनी है, हुई वार्ता के निष्कर्ष पर आगे कैसे बढ़ना है और उपलब्ध संसाधनों का प्रयोग आन्दोलन के हित में किस प्रकार किया जायेगा, इन सभी चीजों का निर्धारण और संबंधित घोषणा सोशल मीडिया के माध्यम से की जा रही है।

यह आन्दोलन अभी प्रक्रिया के रूप में ही संचालित है, सरकार के साथ वार्ताओं का दौर जारी है, आगे के घटनाक्रम किस प्रकार के होंगे इसे अभी स्पष्ट नहीं किया जा सकता परन्तु यह स्पष्ट है कि सोशल मीडिया की भूमिका इस आन्दोलन के केंद्र में रही। इंटरनेट डेटा की सरल और कम दामों पर उपलब्धता ने आज हर दूसरे इंसान के हाथों में फोन और सोशल मीडिया की पहुंच को संभव बनाया है, और मानव विकास की इस क्रांतिकारी सहूलियत ने ही आज कृषकों और उनके आन्दोलन को डिजिटल बनाने का बेहतरीन काम किया। आन्दोलन का अंत क्या होगा, इसकी नैतिकता और संगठन की मजबूती कब तक बरकरार रहने वाली है इसका अभी हमें इल्म नहीं परन्तु आगे आने वाले कई आन्दोलन सोशल मीडिया का सही प्रयोग इस कृषक आन्दोलन से जरूर सीखेंगे।

♦♦♦♦♦

संदर्भ सूची

- टिल्लिन, लु. (2011). क्वेश्चनिंग बॉर्डर्स: सोशल मूवमेंट्स, पोलिटिकल पार्टीज़ एंड द क्रिएशन ऑफ़ न्यू स्टेट्स ईन इंडिया. पसिफ़िक अफेयर्स.
- सिरकार, स. (2020, दिसम्बर 21). रिग्रेट ईनकनविनियेंस: फेसबुक रिस्टोर्स किसान एकता मोर्चा पेज. *द क्विंट*. https://www.thequint.com/news/india/facebook-blocked-kisan-ekta-morcha-page-says-farmers-group#read-more
- कुमार, जि. (2020, दिसम्बर 07). किसान आंदोलन के खिलाफ हिन्दी अखबारों में ब्राह्मण-बनिया गठजोड़. *न्यूज़लांड्री* https://www.newslaundry.com/2020/12/07/farmers-protest-news-paper-coverage-hindustan-danik-jagran-casteism
- अमर उजाला नेटवर्क. (2020, दिसम्बर 03). हाईटेक हुए अन्नदाताः सोशल मीडिया से मिल रही किसान आंदोलन को मजबूती. *अमर उजाला*. https://www.amarujala.com/delhi-ncr/the-farmer-movement-is-being-strengthened-through-social-media
- माथुर, अ. (2020, दिसम्बर 18). डिजिटल हुए आंदोलनकारी किसान, ट्विटर-फेसबुक-इंस्टा पर दे रहे लाइव अपडेट्स. आज तक. https://www.aajtak.in/india/news/story/farmer-protest-social-media-accounts-twitter-instagram-youth-target-1178867-2020-12-18
- सभरवाल, ग. (2020, दिसम्बर 22). किसान आंदोलन का समर्थन क्यों कर रहे हैं ब्रिटेन के कई सांसद. बीबीसी. https://www.bbc.com/hindi/international-55399118

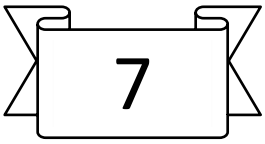

7

कृषक आंदोलनः आओ बनाए एक बेहतर कल

सर्वेश कुमार शाह

सहायक संशोधन वैज्ञानिक, सरदारकृषिनगर दांतीवाडा कृषि विश्वविद्यालय, गुजरात

हर सिक्के के दो पहलु होते है, किसी का लाभ किसी की हानि का सबब बनता है। किन्तु आजाद भारत की सरकारों ने कृषकों के हित में अनेक निर्णय करे है और करे हुए निर्णयों को बदला भी है। सरकार के 'कृषक कल्याण' की मूल भावना के साथ करे गए निर्णयों से आज देश खाद्यान्य के उत्पादन में आत्मनिर्भर हो गया है। जिससे कृषकों, उपभोक्ताओ, व्यावसायकारो, निर्यातकों सभी लाभान्वित हुए है। आज की नई युवा पोढ़ी को शायद अनुभव नहीं होगा कि भारत देश कभी गेंहू आयात करता था जिससे देश के नागरिको की भूख को मिटाई जा सके। आज देश गेंहू, चावल, बाजरा, गन्ना, अरंडी, आलू, केला, आम दूध जैसे विभिन्न कृषि उपज के उत्पादन में विश्व के अग्रणी देशो में स्थान रखता है।

भारत जैसे प्रजातान्त्रिक देश में जनता के चुने हुए प्रतिनिधि गांव, ब्लॉक, तहसील, जिले, प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय स्तर पर होते है जो जनता के मुद्दों, सुख सुविधाओं, भविष्य की जरूरतों, आने वाली चुनौतियों इत्यादि के विषय में सरकार एवं तंत्र को मार्गदर्शन करते है। कृषक भी देश का अभिन्न अंग है। समाज में कृषको की भूमिका को कोई नकार नहीं सकता है। देश के पूर्व प्रधानमंत्री स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्रीजी ने श्जय जवान, जय कृषकश का नारा यूँ ही नहीं दिया है।

भारतीय समाज में कृषकों की सार्थक भूमिका रही है। इतिहास साक्षी है कि राजा–रजवाड़ो के समय पर भी युद्ध के समय में राजा के एक आवाहन पर कृषको ने सैनिको के साथ मातृभूमि की रक्षा करने में उनके प्राणो की आहुति भी दी है। भारत के स्वाधीनता आंदोलन में भी कृषकों का योगदान अहम् है। भारतीय इतिहास में कृषकों द्वारा उनके ऊपर किए जा रहे शोषण या ज्यादतियों का प्रतिरोध करना सामान्य बात है। कृषकों के हित शासन की नीतियों में स्पष्ट न होने पर देश के अन्नदाता खुद के ठगा महसूस करते है और आंदोलन करने के लिए बाध्य होते है। भारतीय इतिहास में कृषको ने समय समय पर छोटे छोटे संगठन में विरोध दर्ज कराया है।

कुछेक समय में ये संगठन बड़े भी हुए और निर्णायक भी। कही कही यह विरोध नेतृत्व के अभाव में दिशाहीन होकर आक्रामक या हिंसक रूप भी अख्तियार कर लेता था जिससे कृषको उनके आंदोलनों से उद्देश्यों की प्राप्ति नहीं हो सकी वरन कृषक आंदोलन बदनाम भी हुए।

भारतीय इतिहास में अंग्रेजों की व्यवस्था शुरू होने से पहले तक शासक या जमींदारों के कृषकों से संबंध सामान्य तौर पर अच्छे थे और और जमींदार या शासक के स्थानिक प्रतिनिधि कृषको पर कर भौगोलिक, वातावरणोय एवं सामयिक परिस्थियों के मूल्यांकन करके करते थे जिससे कृषको में असंतोष न हो साथ ही साथ शासक से वार्तालाप करने में प्रायरू जमींदार या स्थानिक प्रतिनिधि ही कृषकों का नेतृत्व करते थे। लेकिन अंग्रेजी शासन व्यवस्था के दौरान अंग्रेजों द्वारा लागू की गई नई भूमिकर व्यवस्था के कारण नए जमींदारों व साहूकारों का उदय हुआ जो कृषको को आय का श्रोत समझते थे जिसके कारण जमींदारों व कृषकों के बीच सदियों से जो सौहार्दपूर्ण संबंध फीके हो गए। श्परिस्थिति जो भी हो कृषको को पहले से तय करा हुआ कर तो देना ही होगाश के कारण कृषक धीरे–धीरे चंगुल में फंसते चले गए और खुद की जमीन जोतने वाले छोटे कृषकों की हैसियत महज काश्तकारों, बटाईदारों व खेतिहर मजदूरों की ही रह गई। अंग्रेजों की छल एवं छदम नीतियों से कृषको भी बहुत प्रभावित थे। उस दरम्यान वास्तव में जितने भी श्कृषक आंदोलनश हुए, उनमें अधिकांश आंदोलन अंग्रेजों के खिलाफ थे। शोषण के इस कुचक्र को तोड़ने के लिए कृषकों ने कई कोशिशें की। सन् 1780 से लेकर 1857 की क्रांति तक इन कृषकों ने अपने पुराने जमींदारों व शासकों के नेतृत्व में भारत में जगह–जगह पर अंग्रेजों के खिलाफ अनेक असफल विद्रोह किए। सन् १८५७ की क्रांतिकारी घटना के बाद कृषकों ने अपनी मांगों को लेकर सीधे अंग्रेजो से लड़ना शुरू किया। उनकी ज्यादातर मांगे आर्थिक होती थीं और आमतौर पर उनके संघर्ष या आन्दोलन का उद्देश्य व् विस्तार क्षेत्र विशेष तक ही सीमित था। संघर्ष में सीमित संगठन होता था और नेतृत्व की अनुभव हीनता, निरंतरता एवं दीर्घदृष्टि का आभाव भी सामान्य तौर पर देखने को मिलता था। जैसे किसी आंदोलन के कुछ खास उद्देश्य पूरे हो जाते तो वह समाप्त हो जाता था। अंग्रेजों के समय में होने वाले कृषकों आंदोलनो ने स्वतंत्रता आंदोलन में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

ब्रिटिश उपनिवेश काल में कृषक आंदोलन से कई सार्थक नेतृत्व का उदय भी हुआ। कई सफल आंदोलनों का नेतृत्व महात्मा गांधी, वल्लभभाई पटेल, राजेंद्र प्रसाद जैसे नेताओं ने भी किया। स्वतंत्र भारत में ऐसे कई द्रष्ट्रांत हैं जब कृषको ने आंदोलन के माध्यम से अपनी मांगो

को सरकारों के समक्ष रखा है। स्वतंत्रता के पहले भारत में कृषि की दयनीय स्थिति के विरोध में कई कृषक–आंदोलन हुए, जिनकी निम्नलिखित विशेषताएँ थीं–

- जमींदारों द्वारा अवैध और ऊँची लगान दरों का विरोध
- जमींदारों द्वारा कृषि भूमि से कृषकों की जबरन बेदखली का भी विरोध
- औपनिवेशिक आर्थिक नीतियों का विरोध किया गया।

यूं तो अलग–अलग क्षेत्रों में कृषक शासन की कृषक विरोधी नीतियों के खिलाफ एकजुट होते रहे हैं और इन आंदोलनों ने सत्ता के शीर्ष नेतृत्व को विचारने पर विवश भी करा है, कई बार कृषक आन्दोलन सत्ता परिवर्तन का कारण भी बनी है । हालांकि कुछ लोगोने सत्ता लोलुपता में कृषको के आंदोलनों का दुरुपयोग भी करा है। विभिन्न कृषक आंदोलनों की मुख्य कमियाँ नीचे मुजब थी –

- जमींदारों द्वारा भूमि–सुधारों के प्रयासों को असफल करनारू राजनीतिक नजदीकियां और कानूनों की जटिलता एवं अर्थधटन करते हुए जमींदारों ने भूमि–सुधारों के प्रयासों को असफल करने की कोशिश की।
- बड़े मुद्दों से शुरू हुवे कृषक आंदोलन छोटी –छोटी मांगों पर समझौते से समाप्त हो गए।
- कृषक आंदोलनों में महिलाआ की भूमिका की अनदेखी।
- राजनीतिक दलों और नेताओं पर इन आंदोलनों की निर्भरता। ।
- हरित क्रांति के बाद से विभिन्न क्षेत्रों के कृषकों के बीच बढ़ती असमानता।
- निष्कर्ष

उपनिवेश काल के दौरान भी कृषको ने अपनी मांगो के लिए आंदोलन किया है। परन्तु स्वतंत्रता के बाद कृषकों के नाम पर होने वाले आंदोलन राजनीति से ज्यादा प्रेरित थे। कृषको को उनकी उपज का भरपूर दाम मिले साथ ही उपभोक्ताओं को कम कीमत पर खाद्य पदार्थ मिल सके इसलिए विभिन्न सरकार समय समय पर विभिन्न निष्णातो की सलाह लेकर नीतियाँ भी बनाती है। एसे में सरकार द्वारा कृषको की जायज मांगो को सहानभूति से मानना एवं कृषको को राजनीति से प्रेरित छठधर्मिता छोड़ने में ही समाज के हित में है।

♦♦♦♦♦

8

कृषक आंदोलनः आवश्यकता अथवा राजनीतिक अवसरवादिता?

प्रियंका बारगल

शोधार्थी, अर्थशास्त्र अध्ययनशाला, देवी अहिल्या विश्वविद्यालय, इंदौर, (म.प्र.)

हितेन्द्र बारगल

सहायक प्राध्यापक, शासकीय महाविद्यालय, गुनौर, जिला पन्ना, (म.प्र.)

हमारा भारत देश एक कृषि प्रधान देश है, अगर यह कहा जाता है कि कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की रीढ़ है तो यह कोई अतिशयोक्ति की बात नहीं है। हमारी जनसंख्या का आधे से अधिक भाग कृषि कार्य में संलग्न है। भले ही कई कृषकों की सीमांत उत्पादकता शून्य ही क्यों ना हो, पर वे बाहर से देखने पर काम या रोजगार में लगे हुए ही प्रतीत होते है। देखा जाए तो हमारे दश की जनसंख्या ही इतनी ज्यादा है कि कृषि क्षत्र में यह अधिक जनसंख्या ही रोजगार में लगी हुई प्रतीत होती है क्योंकि हमारे देश में कृषि क्षेत्र में अभी भी नवीन तकनीकी के अभाव के कारण अधिकतर काम मनुष्य द्वारा ही संपन्न किया जाता है। उदाहरण के लिए आज भी चाय के बागानों में सस्ते श्रम की उपलब्धता वहां की स्थानीय महिलाओं द्वारा ही पूरी कर दी जाती है।

कृषि प्रधान देश होने के अतिरिक्त हमारे देश की गिनती विश्व के प्रमुख लोकतांत्रिक देशों में भी होती है। लोकतंत्र का संधि विच्छेद करने पर हम लोक अथवा तंत्र शब्द पाते है, जिसमें लोक का अर्थ है "जनता" तथा तंत्र अर्थात "शासन" होता हैं। सीधे शब्दों में कहें तो, जनता का शासन, जिसमें जनता द्वारा अपने प्रतिनिधित्व का चुनाव किया जाए (ना कि देश के सर्वोच्च पद पर किसी परिवार का वंशागत अधिकार रहे) को लोकतंत्र कहा जाता है। भारत देश की बात की जाये तो यहाँ पर राजनीतिक दलों को अपने स्थायित्व हेतु वोट बैंक की जरूरत होतो है। इन्हीं मतदाताओ जो कि कभी–कभी एक बड़े जाति/दल का प्रतिनिधित्व करते है, की सहायता से ही सत्ता पक्ष सत्ता में रह पाता है अन्यथा कई बार विपक्ष द्वारा इन्हीं दलों के माध्यम से सत्ता पलट भी कर दी जाती है। हमारे देश में ऐसे ही एक बड़ा दल या मतदाताओं का संगठन, कृषकों का है जिनकी संतुष्टि ना केवल हमारे देश के खाद्यान्न की आपूर्ति करने में सक्षम है वरन उद्योगों

को चलायमान रखने हेतु कच्चे माल की आपूर्ति से भी संबंधित है। इसके अतिरिक्त इन कृषकों के कारण सत्ता पलट भी संभव है।

कृषि से संबंधित नीतियों में समय–समय पर परिवर्तन होते रहते हैं, इन्हीं नीतियों को अगर कृषक अपने हित में नहीं समझते, ता वे इसे बदलने के लिए जो धरना–प्रदर्शन करते हैं, वही "कृषक आंदोलन" कहलाते हैं। वर्तमान में भी हमारे देश में कृषक आंदोलन जारी है। देखा जाए तो कृषक आंदोलनों का इतिहास बहुत पुराना है। स्वतंत्रता से पूर्व भी हमारे देश में कई कृषक आंदोलन चलाए गए, जिनमें से महत्वपूर्ण है– खेड़ा सत्याग्रह, बारदोली सत्याग्रह, बिजोलिया कृषक आंदोलन, चंपारण सत्याग्रह, तेलंगाना आंदोलन, तारा भगत आंदोलन, मोपला विद्रोह इत्यादि। स्वामी सहजानंद सरस्वती द्वारा वर्ष 1923 में "अखिल भारतीय कृषक सभा" के माध्यम से कृषकों का एक संगठन बनाया गया था। स्वतंत्रता से पूर्व जितने भी कृषक आंदोलन हुए, सभी अंग्रेजी शासन के एवं उनकी नीतियों के खिलाफ थे, जिनका नेतृत्व तत्कालीन महत्वपूर्ण नेताओं जैसे– गांधी जी, पटेल, प्रसाद तथा अन्य महत्वपर्ण व्यक्तियों द्वारा किया गया था। उस समय के कृषकों की मांगे भी जायज थी, जो कि समय के साथ मानी भी गई। भारत गांवों में बसता है, और अधिकतर ग्रामीणों का व्यवसाय खेती–बाड़ी ही है, किंतु हमारे यहां कृषि क्षेत्र में अदृश्य बेरोजगारी पाई जाती है। हमारे देश के आध से ज्यादा कृषक न केवल गरीब है, वरन निरक्षर भी है। देखा जाये, तो मानव जाति की सबसे बड़ी कमजोरी अशिक्षा ही होती है, अशिक्षित व्यक्ति न केवल अपने हक के लिए लड़ नहीं पाता, वरन उसका मौका परास्त व्यक्तियो द्वारा आसानी से इस्तेमाल भी कर लिया जाता है।

उचित शिक्षा के अभाव में ही हमारे कृषक अपनी फसलों का उचित दाम प्राप्त नहीं कर पाते, सही बीज, सही सिंचाई की मात्रा, उचित उर्वरक का चुनाव, कीटनाशकों का चुनाव, इन सब बातों में अनुभव के साथ–साथ कृषि संबंधी शिक्षा की भी आवश्यकता होतो है। आज आवश्यकता इस बात की है कि सभी कृषकों को कृषि संबंधी ज्ञान प्रदान किया जाए, उन्हें कृषि–आदान के क्रय हेतु कम ब्याज पर ऋण बैंकों द्वारा उपलब्ध कराया जाए, जिससे कि वे महाजन अथवा साहूकारों के चंगुल में फंसकर अपनी जमीन से ही हाथ ना धो बैठे, इसके अतिरिक्त कृषकों की खेतों की मिट्टी का परीक्षण कराते हुए, उन्हें सही फसल उगाने की सलाह देने के अलावा उत्तम बीज, खाद व दवाइयां उचित दाम पर उपलब्ध करवाई जानी चाहिए। इसके अलावा अगर प्राकृतिक आपदा के कारण कृषकों की फसल को कुछ भी नुकसान हो, तो उन्हें उस का उचित मुआवजा मिल सके। समय–समय पर सरकार द्वारा इस ओर प्रयास किए जाते रहे हैं। वर्तमान में

तो सरकार द्वारा कृषि विधेयक भी पास किए गए हैं, जिनके माध्यम से कृषकों के हित की बात की गई है तथा बिचौलियों/मध्यस्थों का समापन करते हुए, कृषकों को उनकी फसल का उचित मूल्य दिलवाने पर भी जोर दिया जा रहा है।

भारत जैसे लोकतांत्रिक देश में, जहां किसी नई कल्याणकारी योजना की शुरुआत करने की घोषणा मात्र ही की जाती है, या इस हेतु संसद में बिल लाया जाता है, तो विपक्ष द्वारा बिना सोचे–समझे अथवा उस योजना के लाभ या हानि पर विचार किए, उसका शुरू से ही विरोध करना शुरू कर दिया जाता है, हास्यप्रद स्थिति तो तब बन जाती है, जब इसी प्रकार की योजना जब वह तथाकथित दल सत्ता पक्ष में रहा हो, और उसके द्वारा समान योजना लाने की पहल की गई हो, किन्तु अब विपक्ष में होने पर उसी योजना का विरोध करना कहा का न्याय है? एक स्वस्थ लोकतंत्र में विपक्ष का मजबूत होना तथा सत्तारूढ़ दल की गलत मांगो/योजनाओं का विरोध करना ना केवल आवश्यक है, वरन न्याय पूर्ण भी है। किंतु किसी अच्छे कार्य को, बस यह सोचकर कि सत्ता पक्ष की वाहवाही हो जाएगी ना किया जाने देना या केवल किसी अच्छी योजना का बस इसीलिए विरोध करना कि यह काम हमारे शुभ हाथों ही संपन्न हो, इस बात का अवसर तलाशना कि हमें कैसे सत्ता में आने का मौका मिले, तब हम योजना विशेष को क्रियान्वित करेंगे, यह सब बातें बेमानी प्रतीत होती है। कई बार तो कुछ कुत्सित विचारधारा के लोगों द्वारा गलत बातों का प्रचार करके या आंदोलनकारियों को भड़का करके, उनसे गलत और गैर कानूनी काम भी करवा लिए जाते हैं, जो कि सर्वथा गलत है। कुछ व्यक्तियों द्वारा कृषकों को दिग्भ्रमित करने का प्रयास किया जा रहा है, कि इस नए विधेयक द्वारा सरकार "न्यूनतम समर्थन मूल्य" को तथा मंडियों को समाप्त कर देगी, जिससे कृषकों को नुकसान होगा। वर्तमान में जो कृषक आंदोलन चल रहा है, उसके पीछे सबसे बड़ी वजह सरकार द्वारा लाए गए नए कृषि विधेयक है। सरकार द्वारा 17 सितंबर 2020 तक कृषि से संबंधित तीन विधेयक पास करवा दिए गए है। इन विधेयकों के नाम इस प्रकार है– (1) कृषि उत्पादन व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सुविधा) विधेयक 2020, (2) मूल्य आश्वासन एवं कृषि सेवाओं पर कृषक (सशक्तिकरण एवं संरक्षण) अनुबंध विधेयक 2020 और (3) आवश्यक वस्तु (संशोधन) विधेयक 2020 कृषि उत्पादन व्यापार और वाणिज्य (संवर्धन और सुविधा) विधेयक 2020 के द्वारा सरकार न कृषकों को यह सुविधा दी है, कि वे अपनी मर्जी से अपनी फसल को कहीं पर भी विक्रय कर सकते हैं अर्थात स्थानीय क्षेत्र में अथवा दूसरे राज्यों में। इसका सीधा तात्पर्य यह है, कि "एपीएमसी सीमा" से बाहर भी कृषकों द्वारा फसलों का क्रय–विक्रय संभव हो सकेगा एवं इसके अलावा उपज के विक्रय पर कोई कर नहीं लगेगा। ऑनलाइन बिक्री को भी सुविधा प्रदान की जा

रही है, जिससे कृषकों को फसलों के उचित दाम मिल सके। मूल्य आश्वासन एवं कृषि सेवाओं पर कृषक (सशक्तिकरण एवं संरक्षण) अनुबंध विधेयक 2020 द्वारा सरकार "कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग" व्यवस्था लाने का विचार कर रही है, इस व्यवस्था को लान के पश्चात, अगर कृषकों की फसल, प्राकृतिक आपदा या किसी अन्य वजह से खराब हो जाती है, तो उसके नुकसान की जिम्मेदारी एग्रीमेंट करने वाले पक्ष या कंपनी की होगी। कृषक कंपनो को सीधे अपनी फसल बेच सकेंगे, जिससे कि मध्यस्थों का सफाया हो सकेगा तथा कृषकों को अपनी फसल का उचित दाम मिल सकेगा, जिससे कि उनके आर्थिक विकास को बल मिलेगा। आवश्यक वस्तु संशोधन बिल आवश्यक वस्तु अधिनियम, 1955 में ही लागू हो चुका है, किंतु वर्तमान में सरकार द्वारा यह विधेयक पास करते हुए कृषि उत्पादों पर जैसे कि खाद्य तेल, प्याज, आलू पर भी स्टॉक लिमिट हटा दी गई है, केवल कुछ परिस्थितियों में ही जैसे– प्राकृतिक या राष्ट्रीय आपदा जैसी स्थितियों में इस स्टॉक की सीमा को हटाया जाएगा। इस संशोधन विधेयक के आने के पश्चात आलू, प्याज जैसी वस्तुएं अनिवार्य नहीं रह जाएगी। इस विधेयक को लाने का उद्देश्य, विदेशी निवेश को कृषि क्षेत्र में आकर्षित करना है। इसके अतिरिक्त उत्पादन, भंडारण और वितरण पर सरकारी नियंत्रण को हटाए जाने की व्यवस्था सरकार द्वारा लाई गई है, इसके अलावा उपज के विक्रय पर कोई कर नहीं लगेगा। ऑनलाइन बिक्री को भी सुविधा प्रदान की जा रही है, जिससे कृषको को फसलों के उचित दाम मिल सके। अगर हम इन कृषि विधेयको का सक्ष्मता तथा गहनता से अध्ययन करें, तो हमें ज्ञात होगा कि यह तीनों ही विधेयक कृषकों को फायदा पहुंचाने के लिए ही लाए गए हैं। वैसे भी सरकार शुरू से ही कृषकों की आय दोगुनी करने के लिए प्रयास कर रही हैं तथा इन्हीं प्रयासों के तारतम्य में यह विधेयक एक महत्वपूर्ण कड़ी साबित हो सकते हैं। आवश्यकता है, तो बस इस बात की कि शासन द्वारा ऐसे व्यक्तियों का चुनाव किया जाए, जो कृषक ही हो तथा कृषकों के मध्य में उनका विश्वास तथा लोकप्रियता भी हो, ऐसे व्यक्तियों के माध्यम से सरकार को अपने तीनों विधेयकों की प्रमुख से प्रमुख तथा साधारण से साधारण बात इन कृषकों को सरल व सहज रूप से उन्हीं की भाषा में समझाई जानी चाहिए इसके बावजूद भी अगर कृषकों को इन विधेयकों के संबंध में कुछ शंका हो, तो उस शंका का त्वरित रूप से निराकरण कर दिया जाना चाहिए। इन सकारात्मक तरीकों के अतिरिक्त सरकार को मीडिया का उपयोग भी करना चाहिए, वैसे भी आज मीडिया एक सशक्त संचार माध्यम के रूप में उभर कर सामने आ रहा है, जो कि सरकार की बातों का आम जनता तक पहुंचाने का महत्वपूर्ण कार्य बहुत ही संजीदगी के साथ करता है, अतः सरकार को मीडिया के माध्यम से इन कृषकों के अंदर एक सकारात्मक चेतना का संचार करने की जरूरत है। एक

बार कृषकों को इन विधेयकों की उपयोगिता समझ में आ गई, तो फिर कोई भी कृषकों को भड़का कर अपने नापाक इरादे में शामिल नहीं कर पाएगा। सकारात्मक तरीकों के अतिरिक्त सरकार को ऐसे व्यक्तियों, जो कृषकों के मध्य इन विधेयकों के प्रति नकारात्मक बात फैलाने की कोशिश कर रहे हो, भले ही मीडिया की माध्यम से, तो उनके तथा मीडिया के खिलाफ कड़े कदम उठाने की जरूरत है। ऐसे व्यक्तियों के विरोध में स्वयं, पढ़े– लिखे व जागरूक कृषक जब आगे आएंगे, तो जल्द ही यह कृषक आंदोलन अपना सही उद्देश्य प्राप्त कर सकेगा तथा यह आंदोलन सभी कृषकों की संतुष्टि के साथ समाप्त किया जा सकेगा।

टिप्पणी

सीमांत उत्पादकताः– सीमांत उत्पादन ज्ञात करने की लिए उत्पत्ति के अन्य साधनो जैसे– पूंजी, भूमि, साहस और संगठन की मात्रा की स्थिर रखते हुए किसी एक साधन की इकाई को बढ़ाया जाता है, तो उस इकाई से जितना उत्पादन बढ़ता है, उसे ही उस साधन की सीमांत उत्पादकता कहते है। अदृश्य बेरोजगारीः– अदृश्य बेरोजगारी स तात्पर्य ऐसी बेरोजगारी से है, जिसमे व्यक्ति काम करता हुआ तो प्रतीत होता है, परन्तु उसके काम करने या न करने से उत्पादन पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। एपीएमसी सीमाः– कृषि उपज मंडी समिति की सीमा। कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंगः– इसमें फसल होने के पहले ही कृषकों तथा किसी कंपनी के मध्य समझौता हो जायेगा तथा कृषक उसी कंपनी को पूर्व निर्धारित मूल्य पर अपना माल बेच सकेंगे।

♦♦♦♦♦

सन्दर्भ

1)https://m.economictimes.com/news/economy/agriculture/everythin g-you-need-to-know-about-the-new-agriculture-bills-passed-in-lok- sabha/articleshow/78183539.cms.

2)https://www.thehindu.com/news/national/explainer-why-are-the- agriculture-bills-being-opposed/Article3261641.eceki 3)https://www.timesnownews.com/india/article/what-is-the-farm-bill-and-why-are-farmers-protesting-against-it/689215

4)https://www.thehindubusinessline.com/opinion/agriculture-bills- a-milestone-in-farm-reforms/article32930294.ece

5)http://agricoop.nic.in/hi/agriculture-reforms

डी.सी.आर.सी.

विकासशील राज्य शोध केन्द्र

अकादमिक अनुसंधान केन्द्र भवन

गुरू तेग बहादुर मार्ग

दिल्ली विश्वविद्यालय

दिल्ली–110007

www.dcrc.du.ac.in office@dcrc.du.ac.in @dcrcofficial +91-11-27666281